सबजन एकसमान

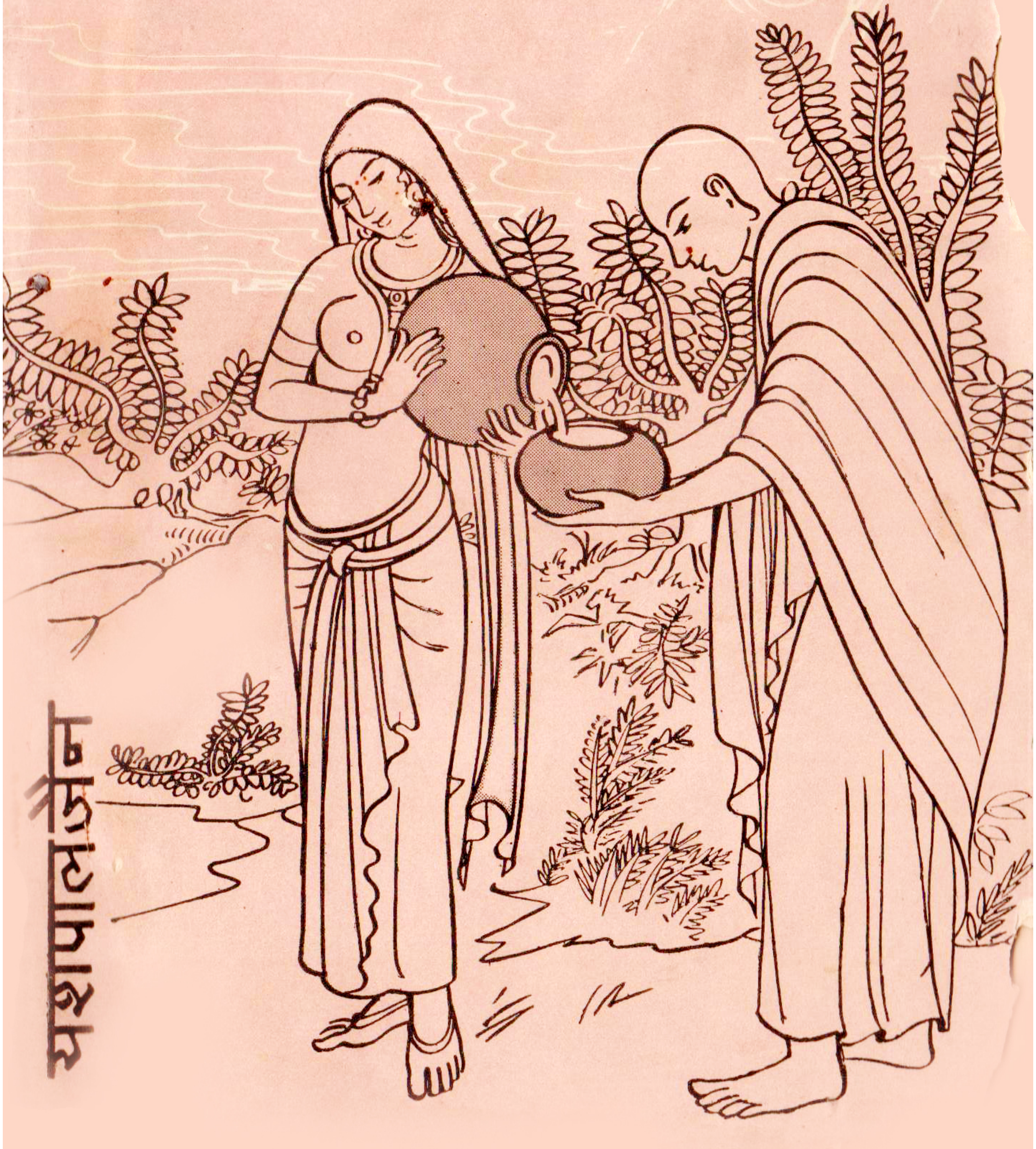

यशपाल जैन

सबजन एकसमान

यशपाल जैन

सब जन
एक समान

मानव-नीति पर आधारित

नौ रूपक

•

यशपाल जैन

•

मुख्य विक्रेता

सस्ता साहित्य मण्डल

कनाट सर्कस, नई दिल्ली

१९७८

प्रकाशकीय

'सबजन एक समान' नाम से यह पुस्तक प्रकाशित हो रही है। इसमें नौ रेडियो-रूपक हैं।

भगवान् बुद्ध, भगवान् महावीर, प्रभु ईसा और महात्मा गांधी ये चारों महापुरुष अथवा धर्म-पुरुष इस जगत् को अपना एक सन्देश दे गये हैं और वह सन्देश युग-युग से, पिछले ढाई-तीन हजार वर्षों से, जन-जन को अनुप्राणित, उद्बोधित और प्राणवान् बनाता आ रहा है। गांधीजी हमारे इस युग को अपनी कृति और अपने विचारों से प्रभावित कर चुके हैं, लेकिन उनकी विचार-धारा का मूल स्रोत भी वहीं से निःसृत है।

गांधीजी हों या बुद्ध, महावीर हों या ईसा, सब यही स्वर लेकर आगे बढ़े थे कि सब जन एक समान हैं। हरिजन-परिजन, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब के भेदों में मानवता आबद्ध नहीं है। गांधीजी ने तो अस्पृश्यता-निवारण को अपना मिशन ही बना लिया था।

लेखक ने विनोबाजी द्वारा प्रवर्तित भूदान-ग्रामदान-आन्दोलन पर भी रूपक रचा है।

रेडियो-रूपक की कला की दृष्टि से तो ये रूपक सुन्दर हैं ही, भाव-भाषा तथा शैली की दृष्टि से भी बढ़िया बन पड़े हैं। जन-सामान्य तक महापुरुषों की क्रांतिकारी वाणी और प्रेरक विचार को पहुँचाने की दृष्टि से लेखक का यह प्रयास सराहनीय है।

इस संकलन के रूपक आबाल-वृद्ध सबके लिए पठनीय तो हैं ही, पर विद्यालयों के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भी इनका अभिनय अनेक रूपों में किया जा सकता है। सुकुमार-मति किशोरों तक गांधी-विचार की यह प्रसादी उनकी जीवन-बुनियाद को सुदृढ़ बनाने में सहायक सिद्ध होगी, ऐसी आशा है।

शान्ति-दिवस

३० जनवरी, १९७०

—प्रकाशक

दो शब्द

मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मेरे कतिपय रूपकों का यह संग्रह पाठकों के हाथों में पहुँच रहा है। अपनी रचनाओं के विषय में विस्तार से कुछ कहना लेखक के लिए आवश्यक नहीं रह जाता, कारण कि उसे जो कुछ कहना होता है, उसे रचनाएँ स्वयं कह देती हैं। फिर भी मैं इतना निवेदन कर देने के लिए पाठकों से क्षमा चाहता हूँ कि इस पुस्तक में संकलित रूपक मुझे विशेष प्रिय हैं। इसके दो कारण हैं। पहला तो यह कि इनके लिखने में मुझे बड़े आनन्द की अनुभूति हुई है। दूसरे, इनके माध्यम से मैंने उन विचारों तथा आदर्शों को पाठकों के सामने रखने का प्रयत्न किया है, जो शाश्वत हैं और जिनमें मानव के लिए कल्याणकारी संदेश है। बुद्ध, महावीर, गांधी प्रभृति ने जो कुछ दिया है और अब विनोबा जो दे रहे हैं, वह सबके लिए है और उसका महत्त्व सार्वकालिक है। इन रूपकों में से प्रायः सभी में पाठक इन्हीं विचारों और आदर्शों की झाँकी पायेंगे। बुद्ध की करुणा, महावीर की अहिंसा, गांधी का प्रेम और विनोबा में इस त्रिवेणी का संगम, सारी मानव-जाति के लिए प्रेरणा का अक्षय स्रोत है।

आज हमारा देश ही नहीं, समूचा जगत् मूल्यों के संकट का सामना कर रहा है। महत्त्वाकांक्षा, पद और सत्ता के आगे मानव और मानव-नीति गौण हो गयी है। हमारे शास्त्रकारों ने मानव को सर्वश्रेष्ठ प्राणी

कहा था। उन्होंने उसे पदों से ऊँचे स्थान पर प्रतिष्ठित किया था। पर आज पद बड़ा हो गया है और मनुष्य छोटा। पद और पदार्थ के मोह के कारण आज चारों ओर क्लेश और अशान्ति दिखाई देती है।

इस पुस्तक के रूपक पाठकों को क्षणभर सोचने के लिए प्रेरित करते हैं, साथ ही वे उस मार्ग की ओर इंगित करते हैं, जिस पर चलकर मनुष्य, समाज और राष्ट्र स्थायी शान्ति और सुख प्राप्त कर सकते हैं।

इन रूपकों को वैसे तो जो भी पढ़ेंगे, उन्हें कुछ-न-कुछ लाभ अवश्य होगा, लेकिन मेरा मानना है कि यह पुस्तक नयी पीढ़ी के लिए, जिसके ऊपर समाज और राष्ट्र का भविष्य निर्भर करता है, विशेष उपयोगी सिद्ध होगी। वे इसमें उस समाज की झलक पायेंगे, जिसके स्वप्न हमारे महापुरुष निरंतर देखते आये हैं और जिसकी नव-रचना अब हमारी नयी पीढ़ी ही कर सकती है।

ये रूपक आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से प्रसारित मेरे रूपकों में से चुने गये हैं। रेडियो-रूपकों की अपनी मर्यादा होती है। उनमें दर्शक सामने नहीं होते। अभिनेता स्वर के द्वारा उनके पास पहुँचते हैं। इसीसे मानव-स्वरों को अधिकाधिक प्रभावशाली बनाने के लिए बीच-बीच में संगीत तथा वाद्य-ध्वनि का सहारा लेना पड़ता है। यही कारण है कि इन रूपकों में पाठकों को जगह-जगह पर वाद्य-ध्वनि का उल्लेख मिलेगा।

यद्यपि ये रूपक आकाशवाणी के लिए लिखे गये हैं, तथापि मुझे विश्वास है कि थोड़े-बहुत परिवर्तन के साथ इन्हें मंच पर भी खेला जा सकता है।

'सर्व सेवा संघ प्रकाशन' ने बड़ा लोकोपयोगी साहित्य प्रकाशित किया है। मेरी यह पुस्तक इसी संस्था द्वारा निकल रही है, इसका मुझे बहुत ही हर्ष है और संतोष भी।

७/८, दरियागंज, दिल्ली
३० जनवरी १९७०

—यशपाल जैन

अनुक्रम

१.	सबजन एकसमान	१
२.	प्रेम के पुजारी	२३
३.	परित्राणाय साधूनाम्	३९
४.	गांधीजी का अनशन-योग	५३
५.	बढ़ते कदम	६५
६.	'जीओ और जीने दो' के मन्त्रदाता	८७
७.	सबजन हिताय, सबजन सुखाय	१०२
८.	माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः	११४
९.	सर्वोदय	१३३

●

१ :: सबजन एकसमान

[गंभीर वातावरण की द्योतक वाद्य-ध्वनि। उतार-चढ़ाव के उपरान्त धीमी ध्वनि की पृष्ठभूमि]

गूँज : (**प्रार्थना के स्वर में**)

'माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।'

—भूमि माता है। मैं उसका पुत्र हूँ।

[वाद्य-ध्वनि धीमी-धीमी जारी रहे]

पुरुष-स्वर १ : (**धीमे स्वर में**)

यह धरती तुम्हारी माता है और तुम सब भाई-भाई हो। अपने माथे के पवित्र जल से तुम इसके चरण पखारते रहना और श्रम के पारिजात-पुष्प चढ़ाते रहना।

[किंचित् निस्तब्धता। पुनः वाद्य-ध्वनि। उसके धीमे पड़ते ही]

पुरुष-स्वर २ : (**गंभीरता से**)

विद्वान्, विनयी और चांडाल को,

गाय, हाथी और कुत्ते को
तू एक ही दृष्टि से देख
एक का ही दर्शन अनेकों में कर।
यह समस्त चर-अचर जगत् परमेश्वर से व्याप्त है,
यहाँ अनेकपन कुछ भी नहीं है।
जो मैं हूँ, वही तू है।

[एक साथ तीव्र वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : ये हैं हमारे धर्म-ग्रंथों और संत-पुरुषों के वचन, जिनकी ध्वनि सहस्रों वर्ष के अंतर को लाँघकर आज भी इस भूमि पर गूँज रही है। यह धरती तुम्हारी माता है…तुम सब भाई-भाई हो… कितने मधुर हैं ये स्वर, कितने उदात्त, कितने प्रेरणादायी। कितना पावन है इनका संदेश ! भारत-भूमि की सनातन काल से यह विशेषता रही है कि आचार-विचार, धर्म-विश्वास, खान-पान, भाषा-बोली आदि का भेद होते हुए भी उसने समन्वय को अपना मूल-मंत्र बनाया है। उसका मानस देश की परिधि में ही आबद्ध नहीं रहा, विश्वात्मा के साथ एकाकार रहा है, लेकिन…लेकिन, जरा ठहरिये, यह सामने क्या हो रहा है ?

भिक्षु : (**बड़ी आकुलता से**) देवि, देवि, मुझे पानी पिला दो। मैं बहुत दूर से आ रहा हूँ। प्यास के मारे मेरा गला सूख रहा है।

कन्या : (**घबराहट के साथ**) स्वामीजी…

[खामोशी]

भिक्षु : अरे, तुम रुक क्यों गयीं ? कहो, क्या बात है ?

कन्या : महाराज, बात यह है कि…कि…

भिक्षु : यह क्या ? तुम बार-बार चुप क्यों हो जाती हो ? जो कहना है, साफ-साफ क्यों नहीं कहतीं ? अच्छा ठीक है, जो कहना है बाद में कहना। पहले मुझे पानी पिला दो। प्यास के मारे मेरे प्राण निकले जा रहे हैं।

कन्या : (**अवरुद्ध कण्ठ से**) स्वामीजी, मैं चाण्डाल-कन्या हूँ।

भिक्षु : (**जोर से हँसकर**) बस, इतनी-सी बात है। इसमें परेशान होने की क्या बात है ! मैंने तुमसे पानी माँगा है, जाति नहीं माँगी।

[निःस्तब्धता। फिर शोर। उत्तेजित स्वर]

कई स्वर : नहीं-नहीं, हम सहन नहीं कर सकते। अछूत लड़की संघ में ! छिः-छिः, हमारा धर्म भ्रष्ट हो जायगा। हम ऐसा कदापि न करने देंगे।

[शोर में वृद्धि। मिले-जुले ऊँचे स्वर। अनन्तर शान्ति]

महाराजा : हे प्रभो, आपके अछूत लड़की को संघ में शामिल कर लेने से सारी प्रजा में असंतोष पैदा हो गया है। ऊँची जाति के लोग क्षुब्ध हैं। उन्हें भय है कि नीच जाति के संसर्ग से उनके धर्म की हानि होगी।

बुद्ध : राजन्, इस दुनिया में कौन छोटा है और कौन बड़ा ? ब्राह्मण और चाण्डाल एक ही योनि से उत्पन्न होते हैं ।

महाराजा : भगवन्, आपका कहना ठीक है, लेकिन ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, ये अलग-अलग जातियाँ तो हैं ।

बुद्ध : नहीं, राजन्, ये अलग-अलग नाम आदमी के रखे हुए हैं । अलग-अलग नाम लेने से उनमें सचमुच का भेद तो पैदा हो नहीं जाता। आदमी-आदमी एक समान हैं । उनके नाक, कान, हाथ-पैर, आँख सब एक ही तरह के हैं ।

[वाद्य-ध्वनि की पृष्ठभूमि में लय के साथ]

गूँज : **ना कोई ऊँचा, ना कोई नीचा**
ना कोई छूत-अछूत है,
कैसा ब्राह्मण, कैसा भंगी,
ईश्वर के सब पूत हैं ।

उद्घोषक : यह था आज से कई हजार वर्ष पूर्व का एक चित्र, जो अकस्मात् मानस-पटल पर उभर आया था। मनुष्य के कुसंस्कारों ने, समाज की पुरातन रूढ़ियों ने, इंसान-इंसान के बीच ऊँच-नीच की दीवारें सदा खड़ी की हैं, लेकिन उनमें कोई सार नहीं है । प्रकृति ने सारे मनुष्यों को एक-सा पैदा किया है । अपनी सृष्टि में उसने कोई भेदभाव नहीं रखा । उसका सूर्य सबको समान

रूप से प्रकाश और गर्मी देता है, उसका चन्द्रमा सबको समान रूप से शीतलता प्रदान करता है, उसका आकाश, उसकी वायु सबको समान रूप से जीवन देती है, परन्तु रुकिये, यह कैसा दृश्य सामने आ गया है !

कई स्वर : (**खीज के साथ**) अरी ओ बुढ़िया, रास्ते से हट। तू अंधी है क्या ? दीखता नहीं, स्वामीजी आ रहे हैं ! रास्ते को नापाक न कर।

बुढ़िया : (**हँसती हुई**) भैया, मुझे यह तो बताओ कि मैं हटकर कहाँ जाऊँ ? तुमने मुझे अछूत मान रखा है, पर यह धरती तो सारी ही भगवान् के पवित्र चरणों से नाप ली गयी है। सब नारायण का मन्दिर है। तुम सब ज्ञानी हो। मुझ मूरख को बता दो कि कौन-सी जगह भगवान् की नहीं है ?

[वाद्य-ध्वनि, उसके बाद थोड़ी खामोशी।]

रामानुजाचार्य : (**विह्वल होकर**) देवि, तुमने मेरी आँखें खोल दीं। मैं संन्यासी हूँ, पर मुझमें कितना मिथ्या अभिमान भरा है। मैंने जो तिलक, माला आदि वैष्णव-चिह्न धारण कर रखे हैं, वे सब तुम्हारे शरीर पर अधिक शोभा दे सकते हैं।

कई स्वर : पर स्वामीजी, यह बुढ़िया तो…

रामानुजाचार्य : नहीं, यह अछूत नहीं है। जो सारी भूमि को नारायण की भूमि मानता है, वह अछूत नहीं हो सकता। तुम लोग जाति का अभिमान,

धन का अभिमान और ज्ञान का अभिमान तिनके के समान छोड़ दो, क्योंकि इनमें से एक का भी अभिमान आदमी को पतन की ओर ले जा सकता है।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि]

गूँज : **प्रभुजी, कौन ऊँच को नीचा**
तूने जगत् एक रस सींचा।
प्रभुजी, नहिं कोई छूत-अछूता।
तेरे एक सरिस सब पूता।
प्रभुजी, घट-घट तेरा बासा।
जल नौखण्ड धरणि आकासा।

उद्घोषक : यह थी स्वामी रामानुजाचार्य के जीवन की एक घटना, जिसने उन्हें एक नयी दृष्टि प्रदान की, उनके अंतर में एक नये प्रकाश का उदय किया। आगे चलकर जब वह वृद्ध हो गये, तब नदी में स्नान करते समय सहारे के लिए वह अपने किसी शूद्र शिष्य के कंधे पर हाथ रखते थे। जिस अभिमान को वह स्नान, शौच और आचमन से दूर नहीं कर सकते थे, वह शूद्र-कुमार के स्पर्श से हो गया। उन्होंने तथा दूसरे बहुत-से संतों ने इस भूमि पर आध्यात्मिकता की ऐसी पावन मंदाकिनी प्रवाहित की, जिसके शीतल जल में अवगाहन कर अनगिनत

नर-नारियों के कलुष धुल गये, हृदय निर्मल हो गये। पर दुर्भाग्य से समाज से ऊँच-नीच, छूत-अछूत की व्याधि समूल नष्ट नहीं हुई। विदेशी सत्ता के जमाने से उसे और भी पोषण मिला और बीसवीं शताब्दी के आरंभ में इस रोग की जड़ें बहुत ही गहरी हो गयीं।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि]

भंगी : (**करुण स्वर में**) मालिक, मुझे एक डोल पानी दे दो। बस, एक डोल। घर में बच्चे प्यास से तड़प रहे हैं।

ब्राह्मण : (**उच्चता की भावना से**) भाग यहाँ से। बड़ा आया है, पानी लेनेवाला! जा-जा, उस पोखरे में से पानी ले आ।

भंगी : महाराज, गर्मी के मारे सारे पोखरे सूख गये हैं। कहीं एक बूँद भी पानी नहीं है। होता तो मैं क्यों आपको कष्ट देता! एक डोल पानी दे दीजिये, मैं आपके हाथ जोड़ता हूँ।

ब्राह्मण : (**क्रोध में भरकर**) नहीं, मैं नहीं दे सकता। चल हट यहाँ से। खबरदार, जो कभी इस ओर आया।

उद्घोषक : अछूतों के प्रति सवर्णों का ऐसा ही व्यवहार था। बेचारे अछूत गढ़ों और पोखरों के गन्दे पानी से अपना काम चलाते थे। सवर्णों के कुओं

पर पैर रखने तक की उन्हें हिम्मत नहीं होती थी। यदि उन्हें कोई अधिकार था तो ऊँची जातियों की गुलाम की तरह सेवा करने का।

पुरुष-स्वर १ : उन्हें मैला उठाना पड़ता था।

पुरुष-स्वर २ : उन्हें नालियाँ साफ करनी पड़ती थीं।

स्त्री-स्वर : उन्हें सवर्णों की जूठन खानी पड़ती थी।

पुरुष-स्वर १ : उन्हें ऊँची जाति के लोग छू नहीं सकते थे। छू जाने पर उन्हें स्नान करना पड़ता था।

पुरुष-स्वर २ : उन्हें समाज में हर तरह की लांछनाएँ सहनी पड़ती थीं।

स्त्री-स्वर : यहाँ तक कि उनके लिए मन्दिरों के द्वार भी बन्द थे।

[वेदनासूचक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : माना जाता था कि अछूतों की छाया पड़ने से देव-मूर्तियाँ अपवित्र हो जायेंगी।

स्त्री-स्वर : उनमें से देवता के प्राण निकल जायेंगे।

उद्घोषक : कितनी बड़ी विडम्बना थी ! बच्चे की सफाई करनेवाली माँ प्रेम पाती है, डॉक्टर रोगी की सेवा करते कृतज्ञता का पात्र बनता है, पर हमारे घर और गलियों की सफाई करनेवाला व्यक्ति अछूत कहलाता है और नीची निगाह से देखा जाता है। देश के दस-पाँच नहीं, सौ-दो सौ नहीं, सात करोड़ व्यक्ति इस दुर्व्यवहार के

शिकार हो रहे थे। सामाजिक रूप में वे अछूत थे, आर्थिक दृष्टि से गुलामों से भी बदतर थे और धार्मिक दृष्टि से वे कठोर बन्धनों में जकड़े थे। लेकिन कहते हैं, जब इस धरा पर धर्म की हानि होती है तो कोई-न-कोई महापुरुष अवतरित होकर धर्म की रक्षा करता है। अछूतों के लिए जब सारे रास्ते बन्द थे, उनके चारों ओर घोर अन्धकार छाया था, सहसा एक ज्योति उदित हुई। वह थी युग-पुरुष गांधी के रूप में। मानवता के इस पुजारी के लिए सात करोड़ तो दूर, एक व्यक्ति का भी तिरस्कार असह्य था। उसने छुआछूत को हिन्दू-जाति के लिए भयंकर अभिशाप माना और उसके विरुद्ध बड़े जोर की आवाज उठायी।

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने कहा—यदि हम भारत की आबादी के इतने बड़े अंश को स्थायी गुलामी की हालत में रखना चाहते हैं और उन्हें जान-बूझकर राष्ट्रीय संस्कृति के फलों से वंचित रखना चाहते हैं, तो स्वराज्य एक अर्थहीन शब्द-मात्र होगा। आत्म-शुद्धि के इस महान् आन्दोलन में हम भगवान् की सहायता की आकांक्षा रखते हैं, लेकिन उनकी प्रजा के सबसे अधिक सुपात्र अंश को मानवता के अधिकारों से वंचित रखते हैं। यदि हम स्वयं मानवीय दया से शून्य हैं तो

उसके सिंहासन के निकट दूसरों की निष्ठुरता से मुक्ति पाने की याचना हम नहीं कर सकते।

स्त्री-स्वर : उन्होंने यह भी कहा—अस्पृश्यता जाति-व्यवस्था की उपज नहीं है, बल्कि उस ऊँच-नीच के भेद की भावना का परिणाम है, जो हिन्दू-धर्म में घुस गयी है और उसे भीतर-ही-भीतर कुतर रही है। इसलिए अस्पृश्यता के विरुद्ध हमारा आक्रमण इस ऊँच-नीच की भावना के विरुद्ध हीहै।

उद्घोषक : गांधीजी ने भारतीय समाज से उस कलंक को मिटाने के लिए अपना स्वर ही ऊँचा नहीं किया, उसके लिए ठोस कदम भी उठाये। उन्होंने अछूतों को 'हरिजनों' की संज्ञा से विभूषित किया, अपने पत्रों का नाम 'हरिजन' रखा और अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलन को अधिक शक्तिशाली तथा पवित्र बनाने के लिए २१ दिन का उपवास किया। उनके उपवास और बाद में नौ महीने के उनके देशव्यापी प्रवास के फलस्वरूप सवर्णों की आँखें खुलीं। स्थान-स्थान पर मन्दिर, धर्मशालाएँ, कुएँ हरिजनों के लिए खुले। हरिजन-सेवा के काम के लिए लाखों रुपये लोगों ने गांधीजी की झोली में डाले, लेकिन कुछ प्रतिक्रियावादी सनातनियों ने उनका भारी विरोध किया।

पुरुष-स्वर १ : पूना में किसी धर्मान्ध ने उनकी मोटर पर बम फेंकने का प्रयास किया, लेकिन दैवयोग से गांधीजी उस मोटर में नहीं थे ।

पुरुष-स्वर २ : वैद्यनाथधाम के समीप जसीडीह स्टेशन पर कुछ पंडों ने उनकी मोटर पर लाठियाँ बरसायीं, लेकिन भगवान् की कृपा से उनके चोट नहीं आयी ।

स्त्री-स्वर : काशी के एक सवर्ण ने अपनी टोली लेकर उनके कार्यों में सब प्रकार की बाधाएँ डालीं ।

पुरुष-स्वर १ : गांधीजी ने एक हरिजन-कन्या को अपने आश्रम में रखा, जिससे उन्हें बड़े भारी तूफान का सामना करना पड़ा ! · · ·

[दुःखसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : लेकिन वह महापुरुष अपने रास्ते से तनिक भी विचलित न हुआ । सवर्णों के अन्तर्पट खोलने के लिए वह सारे देश में घूमे, कहीं-कहीं तो उन्होंने पैदल यात्रा भी की । उनकी और सेवा-व्रती ठक्कर बापा आदि की साधना से बहुत-से सवर्णों का विवेक जागृत हुआ, उनका अज्ञान और अभिमान कुछ अंशों में दूर हुआ, साथ ही हरिजनों में मानवोचित अधिकारों के लिए चेतना उत्पन्न हुई । गांधीजी की प्रार्थना-सभा के गंभीर वायुमण्डल में ये स्वर मुखरित होते रहते थे :

कई स्वर :

रघुपति राघव राजा राम ।
पतित पावन सीता राम ।।
मानव-मानव एक समान ।
सबको सन्मति दे भगवान ।।

भेदभाव का रहे न नाम ।
बने प्रेम का भारत धाम ।।
सजे सुमति का सारा साज ।
उतरे भू पर तेरा राज ।।

रघुपति राघव राजा राम ।
पतित पावन सीता राम ।।

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : हरिजनों को उनका उचित दर्जा और गौरव दिलाने के लिए गांधीजी स्वयं हरिजन बने, मैला हटाने और सफाई करने आदि के काम उन्होंने स्वयं अपने हाथों किये और अपने साथियों से करवाये। उन्होंने उन मन्दिरों में जाने से इनकार कर दिया, जिनमें हरिजनों के प्रवेश पर प्रतिबन्ध था। उन्होंने तो यहाँ तक कहा :

गांधीजी : मैं फिर जन्म लेना नहीं चाहता, पर अगर मेरा पुनर्जन्म हो तो मैं अछूत जाति में पैदा होना चाहूँगा, ताकि मैं उनके दुःखों का साथी बनूँ, उनके कष्टों को भोगूँ और उनकी दुःखमय अवस्था से उनके उद्धार का यत्न करूँ।

पुरुष-स्वर २ : उनकी तपस्या ने लोगों को छुआछूत की बुराई के साथ लड़ने और समाज में व्याप्त ऊँच-नीच और छोटे-बड़े की दूषित मनोवृत्ति को दूर करने के लिए सजग और सचेष्ट बनाया।

स्त्री-स्वर : उन्होंने समाज का ध्यान इस बुनियादी सचाई पर केन्द्रीभूत किया कि श्रम पूजा है और छोटी-से-छोटी सेवा का भी उतना ही महत्त्व है, जितना बड़ी-से-बड़ी सेवा का।

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने यह भी बताया कि सेवा का काम करके कोई भी इंसान अछूत नहीं बनता। आदमी अछूत बनता है अपनी कषायों[1] से, अपने दोषों से, अपनी बुराइयों से।

पुरुष-स्वर २ : देश के आजाद होने के बाद अब तो कानून ने भी घोषित कर दिया है कि छुआछूत अपराध है और उसके अपराधी के लिए दण्ड का विधान है।

[वाद्य-ध्वनि]

समवेत स्वर : सब जन एक समान,
सब में एक प्राण।

---

१. क्रोध, मान, माया और लोभ इन चारों को कषाय कहते हैं। कषाय वह, जो आत्मा को कसे, क्लेश पहुँचाये।

हरि के गीत गाओ,
हरि के गीत गाओ ।।

सब जन एक समान
सब में एक प्राण, एक प्राण ।

उद्घोषक : प्राचीनकाल से लेकर अब तक हमारे ऋषियों ने, सन्तों ने, महापुरुषों ने एक ही बात कही है——इस संसार में सब कुछ नश्वर है । यदि कुछ शाश्वत है तो वह है प्रेम और प्रेम ही परमेश्वर है ।

[आशासूचक वाद्य-ध्वनि के साथ समाप्त]

२ :: प्रेम के पुजारी

[वाद्य-ध्वनि, उसीके साथ समवेत स्वर में]

रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम।
ईश्वर अल्ला तेरे नाम, सबको सन्मति दे भगवान।

उद्‌घोषक : "ईश्वर अल्ला तेरे नाम" (**कुछ रुककर**) "सबको सन्मति दे भगवान"—रामधुन के ये स्वर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को कितने प्रिय थे ! इन्हीं स्वरों से उनकी पुनीत प्रार्थना-स्थली नित्य गूँजा करती थी। सैकड़ों नर-नारी भावना-विभोर होकर इन स्वरों में अपने स्वर मिलाते हुए गाते थे :

"रघुपति राघव राजाराम।" राष्ट्रपिता बापू ! उनके स्मरण से हमारे इतिहास के कितने पृष्ठ आँखों के सामने खुल जाते हैं—वे पृष्ठ, जिन पर अगणित लोगों के सुख-दुःख की कहानियाँ लिखी हैं, जिनमें कितनों की आशा-

निराशा छिपी है। इन्हीं पन्नों पर अंकित है एक महान् राष्ट्र के करवट लेने, आँखें खोलकर उठ खड़े होने तथा विदेशी सत्ता की दासता की बेड़ियों को तोड़ने और स्वतंत्र होने की रोमांचकारी गाथाएँ। वे जनमें काठियावाड़ में, लेकिन उनका हृदय इतना विशाल था कि उसने कोई भी संकीर्ण सीमा स्वीकार न की।

स्त्री-स्वर : ये सबके और सब उनके हो गये।

पुरुष : समूचा भारत उनका कार्यक्षेत्र बना और यहाँ के कोटि-कोटि नर-नारियों का सुख-दुःख उनका अपना सुख-दुःख हो गया।

स्त्री : उनका प्रेम जात-पाँत, धर्म अथवा देश का भेद नहीं जानता था। कहीं से भी कराह उठती कि उनका हृदय व्यथित हो जाता था।

पुरुष : उनके दिल में किसीके प्रति भी घृणा या विद्वेष न था। इस भूमि से विदेशी सत्ता को हटानेके लिए जोरों का प्रयत्न करते हुए भी वह कहा करते थे कि अंग्रेजों के प्रति हमारा तनिक भी दुर्भाव नहीं है। हम तो अंग्रेजी शासन को यहाँ से हटाना चाहते हैं।

स्त्री : उनके इस असीम अनुराग के कारण ही तो सबके हृदय में उनके लिए गहरी आत्मीयता थी। सारी दुनिया में उनका नाम और उनका प्यार

पहुँचा था और अन्य देशों के असंख्य व्यक्ति अनुभव करते थे कि गांधी भारत के ही नहीं, उनके अपने भी हैं।

उद्घोषक : ऐसे थे राष्ट्रपिता, तभी तो ३० जनवरी को उनके महाप्रयाण के समाचार से सारा संसार सिसक उठा था। जिन्होंने उन्हें देखा था, उनकी आँखों से तो आँसुओं की धारा उमड़ी ही, जिन्होंने उन्हें नहीं देखा था, उन्हें भी लगा कि उनका कोई आत्मीय जन चला गया।

[वेदनासूचक वाद्य-ध्वनि, किसी स्त्री के सिसकने का स्वर]

बालक : माँ, क्या हुआ ! तुम रोती क्यों हो ?

स्त्री : (**रोते हुए**) क्या कहूँ बेटा, कुछ कहते नहीं बनता।

बालक : फिर भी कुछ तो कहो।

स्त्री : (**गहरी वेदना के साथ**) अभी रेडियो पर खबर आयी है, किसीने गांधीजी को गोली मार दी।

बालक : (**आश्चर्यचकित होकर**) गोली मार दी ? गांधी के ? नहीं माँ, ऐसा नहीं हो सकता !

स्त्री : बेटा, इस दुनिया में कभी-कभी अनहोनी बातें हो जाया करती हैं। यह भी एक ऐसी ही बात है। (**लम्बी साँस लेकर**) गांधी चले गये !

[फिर दुःखसूचक वाद्य-ध्वनि]

बालक : (**रुँधे गले से**) माँ, अगर इस दुनिया में बन्दूकें न बनी होतीं तो कितना अच्छा होता !

उद्घोषक : ये थे दूर देश के एक माँ-बेटे के उद्गार, जिन्होंने

गांधीजी को कभी देखा तक न था । ऐसे एक नहीं, अनगिनत परिवार शोक-संतप्त हो उठे। एक विदेशी राजनेता की भावनाएँ इन शब्दों में फूट पड़ीं :

विदेशी स्वर : मैंने गांधी को कभी नहीं देखा, मैं उनकी भाषा नहीं जानता, मैंने उनके देश में कभी पाँव नहीं रखा, परन्तु फिर भी मुझे इतना दुःख हो रहा है, जैसे मैंने कोई अपना और प्यारा खो दिया हो। इस असाधारण मनुष्य की मृत्यु से सारा संसार शोक में डूब गया है ।

उद्घोषक : उनकी बात ठीक थी । आधुनिक इतिहास में किसी भी व्यक्ति के निधन पर इतना गहरा और इतना व्यापक शोक आज तक नहीं मनाया गया । दुनियाभर के झंडे झुक गये, मानवता ने भी विह्वल होकर अपनी ध्वजा नीची कर दी । वह उसकी आत्मा के प्रवक्ता थे न!

[वेदनासूचक वाद्य-ध्वनि]

गूँज : **जिनके पावन पुण्य स्मरण में, मुखर हो रही भारती।**
हीरे-पन्नों की थाली में धूप-दीप की आरती।।
जिनके शुभ आदर्श राष्ट्र को लिये जा रहे लक्ष्य पर।
जिनकी शुचि पद धूल जिन्दगी को उस पार उतारती।।
छिपा विराट ज्वलन्त सृजन था उनके उस बलिदान में।
आजादी का दीप जलाया जिसने उस तूफान में।।

उद्घोषक : लेकिन बापू के प्रेम का साम्राज्य सहज ही दुनिया में नहीं फैल गया। इसके लिए उन्होंने जीवनभर तपस्या की। न्याय और सत्य के लिए वे निरन्तर संघर्ष करते रहे, अन्याय के विरुद्ध अविचल भाव से जूझते रहे। पढ़-लिख-कर वे बैरिस्टर बने, लेकिन भाग्य ने उनके लिए कुछ और ही लिख रखा था। बैरिस्टर होने के कुछ ही समय बाद एक मुकदमे में दक्षिण अफ्रीका गये। मुकदमे का तो पंच-फैसला हो गया, लेकिन साथ ही उनके जीवन की धारा नयी दिशा में मुड़ गयी। दक्षिण अफ्रीका में बहुत से भारतीय रहते थे, पर उन पर कड़े बन्धन थे और वे मानवीय अधि-कारों से वंचित थे। गांधीजी ने उन अधि-कारों को प्राप्त करने के लिए सबसे पहली लड़ाई वहीं लड़ी।

पुरुष : वह अपने ढंग की अनोखी लड़ाई थी। 'सत्याग्रह' का वहीं आविष्कार हुआ। हजारों स्त्री-पुरुष जेल गये।

स्त्री : स्वयं गांधीजी ने पहले-पहल वहीं पर जेल-यात्रा की और अधिकारियों के अन्याय का डटकर मुकाबला किया।

पुरुष : सत्याग्रह की वह लड़ाई कई वर्ष तक चली। सरकार हैरान हो गयी और अन्त में उसे

भारतीयों को उनके मानवोचित अधिकार देने के लिए बाध्य होना पड़ा।

उद्घोषक : यदि यह संग्राम न किया गया होता और गांधीजी तथा उनके नेतृत्व में भारतीयों ने दृढ़तापूर्वक अत्याचारों का अहिंसक रूप से सामना न किया होता, तो आज दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के लिए कोई स्थान न रहा होता। इतना ही नहीं, दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की विजय से अन्य ब्रिटिश उपनिवेशों के भारतीय भी बहुत कुछ अंशों में बचे रहे। उससे भी बड़ी बात यह हुई कि सत्याग्रह की महत्ता सिद्ध हुई और वहाँ जो प्रयोग किये गये, वे भारत में आगे चलकर होनेवाले संघर्ष की आधार-शिला बने। गांधीजी की विजय के समाचार ने भारत में एक नयी चेतना उत्पन्न कर दी। सन् १९१५ में जब गांधीजी स्वदेश लौटे तो बड़ी उमंग के साथ देशवासियों ने उनका स्वागत किया।

पुरुष : किन्तु घर आकर वे चैन से नहीं बैठ गये। एक के बाद एक, अनेक समस्याएँ उनके सामने आती गयीं। सच बात यह है कि वे किसी भी अन्याय और अत्याचार के आगे झुकना नहीं जानते थे और अपने देशवासियों से भी वह ऐसी ही अपेक्षा रखते थे।

स्त्री : पर वह जमाना ही कुछ और था। भारत में विदेशी शासन था, जिसके दबाव के नीचे भारतीयों की चेतना लुप्त हो गयी थी। गांधीजी ने उनमें नये प्राण फूँके।

पुरुष : भारत में आते ही वीरमगाम की ज़कात का मसला सामने आया। गांधीजी ने सलाह दी कि इस मामले में सत्याग्रह करने के लिए तैयार रहा जाय। सरकार को इसकी खबर मिली। सत्याग्रह की संभावना से उसने झट चुंगी रद कर दी।

स्त्री : बाद में चम्पारन के निलहे गोरों के अत्याचारों का उन्होंने प्रतिकार किया। सदियों की बुराई छह महीने के संघर्ष से दूर हो गयी।

पुरुष : अहमदाबाद के मिल-मजदूरों की लड़ाई के इतिहास को कौन नहीं जानता? खेड़ा के सत्याग्रह को कौन भूल सकता है?

स्त्री : फिर रौलट-कानून के विरुद्ध देशभर में प्रदर्शन हुए, जलियाँवाला बाग का काण्ड और अमृतसर की ऐतिहासिक कांग्रेस हमारे इतिहास की कभी न भूलनेवाली घटनाएँ हैं।

पुरुष : लेकिन उनके असहयोग-आन्दोलन ने तो देश में तूफान खड़ा कर दिया।

[प्रखर वाद्य-स्वर]

पिता : क्यों रे रामू, तू कॉलेज क्यों नहीं जाता?

बालक : नहीं पिताजी, मैं कॉलेज हर्गिज नहीं जाऊँगा। सारे लड़कों ने तय कर लिया है कि वे गांधी-जी की बात मानेंगे और कोई भी पढ़ने नहीं जायगा।

पिता : अरे, पढ़ाई का नुकसान होगा सो।

बालक : लेकिन देश की आजादी उससे भी ज्यादा कीमती है।

[वाद्य-स्वर]

मुवक्किल : वकील साहब, ओ वकील साहब, जल्दी तैयार हूजिये, कचहरी को देर हो रही है।

वकील : तुम अपना और कोई इंतजाम कर लो, भाई ! मैंने तो वकालत छोड़ दी। देश में आग लगी है। गांधीजी कहते हैं, सरकार के साथ हमको कोई भी सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए।

मुवक्किल : पर वकील साहब, मेरे मुकदमे का क्या होगा ?

वकील : मैं क्या जानूँ, मैं देश के साथ दगा नहीं कर सकता।

उद्घोषक : इतना ही नहीं, लोगों ने सरकारी उपाधियों तक का बहिष्कार कर दिया। ज्यों-ज्यों आग भड़कती गयी, सरकार का दमन-चक्र भी तेज होता गया। मजे की बात यह कि दमन ने लोगों के उत्साह में घी का काम किया। स्वदेशी आन्दोलन, बारडोली का सत्याग्रह, नमक सत्याग्रह, व्यक्तिगत सत्याग्रह, 'भारत छोड़ो'-

आन्दोलन, भारतीय स्वातंत्र्य-संग्राम की ऐसी मंजिलें थीं, जो देश को उत्तरोत्तर लक्ष्य की ओर बढ़ाती गयीं । एक ओर शक्तिशाली विदेशी सत्ता थी, जिसके पास फौजें थीं, तोपें-बन्दूकें थीं, दूसरी ओर गांधीजी थे, जिनके पास कोई भी भौतिक बल न था, लेकिन उनके सत्याग्रह, असहयोग, निष्क्रिय प्रतिरोध तथा उपवास के अमोघ अस्त्रों के आगे सरकार की रूह काँपती थी ।

स्त्री : अपने इन्हीं अस्त्रों से उन्होंने सारी लड़ाइयाँ लड़ीं । दक्षिण अफ्रीका में इनके सफल प्रयोग से उनमें असीम आत्म-विश्वास पैदा हो गया था ।

पुरुष : सत्य और अहिंसा के प्रति उनकी प्रारम्भ से ही निष्ठा थी । वह आजीवन सत्य के राजमार्ग पर चलते रहे ।

स्त्री : अहिंसा पर भी उनकी इतनी ही गहरी श्रद्धा थी ।

पुरुष : उनका कहना था कि अहिंसा की शक्ति अपरिमेय है । उसी तरह अहिंसक की शक्ति भी अतुलित है ।

स्त्री : लेकिन उन्होंने यह भी कहा कि अहिंसा डरपोक का, निर्बल का, धर्म नहीं है । वह तो बहादुर और जान पर खेलनेवाले का धर्म है ।

"तलवार से लड़ते हुए जो मरता है, वह अवश्य बहादुर है, लेकिन जो मारे बिना धैर्यपूर्वक खड़ा-खड़ा मरता है, वह अधिक बहादुर है ।"

उद्घोषक : इनसे भी बढ़कर बात थी मानव के गुणों पर उनका अटूट विश्वास । अपने इसी विश्वास की पारसमणि से जाने कितनी मणियाँ उन्होंने खोज निकालीं । वे कहते थे––संसार आज इसलिए खड़ा है कि यहाँ पर घृणा से प्रेम की मात्रा अधिक है, असत्य से सत्य अधिक है। धोखेबाजी, जोर-जवर तो बीमारियाँ हैं, सत्य और अहिंसा स्वास्थ्य है । यह बात कि संसार अभी तक नष्ट नहीं हो गया है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि संसार में रोग से अधिक स्वास्थ्य है ।

पुरुष : गांधीजी द्रष्टा थे । वे जानते थे कि विदेशी सत्ता को तो एक-न-एक दिन इस भूमि से बिदा लेनी ही है, इसलिए उससे संघर्ष करते हुए भी उनका ध्यान अपने देश की बुनियाद को पक्का करने पर रहा था ।

स्त्री : अपने देश के माथे पर से अस्पृश्यता का कलंक दूर करने के लिए उन्होंने जी-जान से प्रयत्न किया ।

पुरुष : साम्प्रदायिकता के भूत को भगाने के लिए अपने प्राणों की बाजी लगायी ।

स्त्री : मद्य-निषेध पर जोर दिया ।

पुरुष : भारत गाँवों में बसता है । गाँवों को उठाने के लिए उन्होंने अनेकसूत्री रचनात्मक कार्यों का जाल सारे देश में बिछा दिया ।

स्त्री : घर-घर चरखे चलने लगे ।

पुरुष : गांधीजी ने कहा, "चरखा वह मध्यवर्ती सूर्य है, जिसके गिर्द अन्य सब तारागण घूमते हैं । ओक नाम के वृक्ष का बीज कितना छोटा होता है, लेकिन जहाँ एक बार उसकी जड़ जमी कि उसका विस्तार होता जाता है और वह कितनी ही वनस्पतियों को आश्रय देता है । अगर चरखे की वृत्ति फैल गयी तो चरखा सिर्फ चरखा ही थोड़ा रहनेवाला है, उसकी छाया में असंख्य उद्योगों को स्थान मिलेगा । उसकी सुगन्धि से सारी दुनिया सुगन्धित हो जायगी ।"

स्त्री : खादी आजादी के संग्राम की वर्दी बनी । बापू ने कहा, "स्वराज्य के समान ही खादी राष्ट्रीय जीवन के लिए श्वास के जितनी ही आवश्यक है । जिस तरह स्वराज्य को हम नहीं छोड़ सकते, उसी तरह खादी को भी नहीं छोड़ सकते । खादी को छोड़ने के मानी होंगे भारतीय जनता को बेच देना, भारत की आत्मा को बेच देना ।"

उद्घोषक : इस प्रकार उन्होंने देश के सर्वांगीण विकास का प्रयत्न किया। उन्होंने श्रम को प्रतिष्ठा दी। वे अपने को दरिद्रनारायण का प्रतिनिधि मानते थे। वे भारत को ऐसा रूप देना चाहते थे, जिसमें निर्धन-से-निर्धन व्यक्ति भी यह अनुभव कर सके कि यह उसका अपना देश है, जिसके निर्माण में उसकी भी सुनी जायगी, जिसमें ऊँच-नीच का भेद-भाव नहीं होगा, जिसमें सभी जातियाँ पूर्ण सामंजस्य के साथ जीवनयापन करेंगी। वह कहते थे कि ऐसे भारत में छुआछूत और मादक पदार्थों का शाप नहीं होगा, स्त्रियों को पुरुषों के ही समान अधिकार मिलेंगे। यह था भारत, जिसके वह स्वप्न देखा करते थे।

स्त्री : उनकी निगाह सारी दुनिया पर रहती थी।

पुरुष : वह कहते थे कि मैं सारे विश्व के दृष्टिकोण से सोचना चाहता हूँ। मेरे देश-प्रेम में साधारण रूप से सारी मानवता का हित सम्मिलित है। इसलिए भारत के प्रति मेरी सेवा में मानव-जाति की सेवा शामिल है।

स्त्री : उन्हें हर घड़ी दीन, दलितों तथा गरीबों का ध्यान रहता था। गोलमेज परिषद् में लन्दन गये तो वहाँ भाषण देते हुए उन्होंने सबसे

पहले यही कहा कि "मैं करोड़ों अभावग्रस्त व्यक्तियों का प्रतिनिधि होकर यहाँ आया हूँ।"

पुरुष : शिमला में वायसराय से मिलने गये तो जितना अनिवार्य था, उससे एक क्षण भी अधिक नहीं रुक सके। उन्होंने कहा, "मैं कैसे रुक सकता हूँ। आश्रम में मेरे रोगी मेरी राह देख रहे होंगे।"

उद्घोषक : उन्होंने कोटि-कोटि मूक मानवों को वाणी प्रदान की। उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उनकी कथनी और करनी में भेद न था। वे जो कुछ कहते थे, उसे पहले अपने जीवन में उतार लेते थे। उन्होंने सत्य और अहिंसा की बात कही तो पहले स्वयं उस पथ के पथिक बन गये, ब्रह्मचर्य की बात कहने से पहले स्वयं ब्रह्मचर्य का व्रत ले लिया। गरीबी की बात मुँह से तब निकाली, जब स्वयं कुटिया में रहने लगे। गाँवों की बात कहने से पहले खुद गाँव में जा बैठे। उनके कपड़े कम पहनने की भी बड़ी हृदयस्पर्शी कहानी है। बापू उड़ीसा की यात्रा कर रहे थे। एक दिन उन्होंने एक स्त्री को देखा, जो बड़े ही फटे और मैले कपड़े पहने थी। कपड़ा इतना छोटा कि मुश्किल से आधा शरीर ढँक पाती थी। बापू ने कहा :

गांधीजी : "माई, तुम इतना मैला कपड़ा क्यों पहने हो? इसे धोतीं क्यों नहीं? इतना आलस किस काम का!"

स्त्री : (**हैरानी की आवाज में**) बापू, इसमें आलस की बात नहीं है। मेरे पास दूसरा कोई कपड़ा है नहीं, जिसे पहनकर मैं इसे धोऊँ।

उद्घोषक : यह सुनकर गांधीजी की आँखों में पानी भर आया। उन्होंने उसी दिन से प्रतिज्ञा की कि जब तक देश में स्वराज्य नहीं होता और गरीब-से-गरीब को भी तन ढँकने को काफी कपड़ा नहीं मिलेगा, तब तक मैं भी कपड़े नहीं पहनूँगा। लाज ढँकने के लिए एक लँगोटी ही मेरे लिए काफी होगी। दीन-दुखियों के साथ एकाकार होने के कारण ही दुनिया पर उनका इतना प्रभाव था।

[वाद्य संगीत]

गूँज :

चल पड़े जिधर दो डग मग में,
चल पड़े कोटि पग उसी ओर।
पड़ गयी जिधर भी एक दृष्टि,
गड़ गये कोटि दृग उसी ओर॥

जिसके शिर पर निज हाथ धरा,
उसके शिर रक्षक कोटि हाथ।

जिस पर निज मस्तक झुका दिया,
झुक गये उसी पर कोटि माथ ॥

उद्घोषक : उनका जीवन त्याग-तपस्या की लम्बी कहानी है। जाने क्या-क्या उन्होंने नहीं सहा ! अनेक बार जेल गये, घर के विद्रोह का मुकाबला किया, बाहर की यातनाएँ झेलीं। लेकिन वे हिमालय की भाँति अविचल रहे। देश स्वतंत्र हुआ। हर्ष और आनन्द का सागर उमड़ पड़ा। पर वह उसमें सम्मिलित नहीं हुए। वह तो साम्प्रदायिकता की आग बुझाने के लिए नोआखाली में घूम रहे थे--नंगे पैर, अकेले, नितान्त अकेले। रवीन्द्र ठाकुर का 'एकला चलो' गीत वे नित्य-प्रति सुनते थे। बात यह थी कि वह अकेले होते हुए भी अकेले कहाँ थे ! ईश्वर पर उनकी इतनी जीवंत श्रद्धा थी कि वह हर घड़ी उनके साथ रहता था।

स्त्री : शान्ति के महान् उद्देश्य को लेकर वह दिल्ली आये।

पुरुष : और इस अभागिन दिल्ली में वह हो गया, जिसकी किसीने स्वप्न में भी कल्पना न की थी।

[शोकसूचक वाद्य-स्वर]

स्त्री : सन् १९४८ की ३० जनवरी की संध्या को जब

सूरज पश्चिम में डूब रहा था, पूर्व का यह सूर्य सदा के लिए अस्ताचल को चला गया।

उद्घोषक : इस प्रकार राष्ट्रपिता बापू इस भूमि पर आये और दुनिया के रंग-मंच पर अपना पार्ट बड़ी खूबी से अदा करके चले गये। अपने जीवन में प्यार के अतिरिक्त उन्होंने और कुछ नहीं जाना। उनका हृदय प्यार से छलछलाता था। उसका दान वे सतत करते रहे और उसीके लिए उन्होंने समय आने पर अपने प्राण भी दे दिये। उनका पार्थिव शरीर चला गया, लेकिन ऐसे महापुरुष कभी मरते नहीं हैं। वे मिट्टी की काया के नष्ट हो जाने पर ही अमर बनते हैं।

[प्रेरणादायक वाद्य-ध्वनि] ●

३ :: परित्राणाय साधूनाम्

[धीमी-धीमी वाद्य-ध्वनि । उसके समाप्त होते-होते]

स्त्री-स्वर : (लयपूर्वक) **परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ।**

पुरुष-स्वर : (गंभीरता से) **साधूनां परित्राणाय…च दुष्कृताम् विनाशाय…धर्मसंस्थापनार्थाय युगे युगे सम्भवामि ।…**

[हलकी वाद्य-ध्वनि : रुकते-रुकते]

सूत्रधार : कितनी उदात्त, कितनी महान् है गीता की यह वाणी ! कितना आशाप्रद है इसका संदेश । (कुछ रुककर) साधु पुरुषों का उद्धार करने के लिए, दूषित कर्म करनेवालों का नाश करने के लिए और धर्म की स्थापना के लिए मैं युग-युग में प्रकट होता हूँ ।

[वाद्य-ध्वनि—उसके मन्द पड़ने पर]

ऐसी ही एक दिव्यज्योति आज से सौ

वर्ष पूर्व हमारे देश की इस पावन भूमि पर अवतरित हुई थी। बड़े संकट का समय था वह। देश दासता की शृंखलाओं में जकड़ा था, विदेशी सत्ता ने उसकी चेतना को निष्क्रिय बना दिया था, धर्म की हानि हो रही थी, जिस संस्कृति ने एक दिन विश्व को अपनी ओर आकृष्ट किया था, वह निस्तेज हो गयी थी। ऐसे विषम काल में अंधकार को चीरती प्रकाश की एक किरण फूटी।

स्त्री-स्वर : उसने देश को सोते से जगाया।

पुरुष-स्वर : उसने देशवासियों की जड़ता को दूर किया।

स्त्री-स्वर : उसने समाज और राष्ट्र को संगठित रूप से काम करना सिखाया।

पुरुष-स्वर : उसने प्रत्येक क्षेत्र में नीति का समावेश करवाया।

स्त्री-स्वर : उसने हमें प्यार करने की सीख दी।

पुरुष-स्वर : उसने हमें जीने की कला बतायी।

स्त्री-स्वर : उसने हमें आजादी दिलवायी।

पुरुष-स्वर : उसने इस भूमि पर राम-राज्य स्थापित करने का प्रयत्न किया।

सूत्रधार : वह ज्योति, वह किरण, थी मोहनदास करमचन्द गांधी, हम सबके बापू, हमारे राष्ट्रपिता। वह जनमे गुजरात के एक छोटे-से नगर पोरबन्दर में, लेकिन अपनी सेवाओं के बल पर अपने देश के ही नहीं, सारे संसार के बन गये।

उनका कार्यक्षेत्र मुख्यतः भारत था, लेकिन उनकी दृष्टि इतनी व्यापक और उनका हृदय इतना विशाल था कि उनके लिए कोई भी पराया नहीं था।

स्त्री-स्वर : उनकी करुणा सबके लिए थी।

पुरुष-स्वर : उनका प्रेम मानव-मानव के बीच कोई भेद स्वीकार नहीं कर सकता था।

स्त्री-स्वर : उनके जीवन का एक ही उद्देश्य था : संसार के सारे प्राणी सुखी हों, सब एक-दूसरे को प्यार करें और सब अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए जियें।

पुरुष-स्वर : वह कहा करते थे—हरएक धर्म पुकार-पुकार-कर कहता है कि प्रेम से ही यह जगत् बँधा हुआ है। विद्वान् लोग सिखाते हैं कि यदि प्रेम का बन्धन न हो तो पृथ्वी का एक-एक परमाणु अलग-अलग हो जाय और पानी में भी यदि स्नेह न हो तो उसका एक-एक बिन्दु बिखर जाय। इसी प्रकार यदि मनुष्य-मनुष्य के बीच प्रेम नहीं होगा तो हम मृतप्राय ही होंगे।

[वाद्य-ध्वनि : समाप्त होने पर]

स्त्री-स्वर : वह मानव की कमजोरियों को जानते थे।

पुरुष-स्वर : पर वह यह भी मानते थे कि कोई भी व्यक्ति मूलतः बुरा नहीं है।

स्त्री-स्वर : तभी तो वह बुराई से घृणा करते थे, बुराई करनेवाले से नहीं ।

सूत्रधार : उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उनकी कथनी और करनी में अन्तर नहीं था । उनकी अहर्निश एक ही प्रार्थना रहती थी :

गूँज : **असतो मा सद्गमय ।**
तमसो मा ज्योतिर्गमय ।
मृत्योर्माऽमृतं गमय ।

[थोड़ा विराम]

पुरुष-स्वर : हे प्रभो, मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चलो, अंधकार से प्रकाश की ओर और मृत्यु से अमरता की ओर ।

सूत्रधार : यह उनके लिए केवल प्रार्थना नहीं थी, उनके जीवन का मूलमंत्र थी । वह प्रभु के प्रति समर्पित थे । छोटा-बड़ा हर काम उसीका मानकर करते थे । उन्होंने अपने को इतना तपाया कि कंचन बन गये । दूसरों के प्रति वह सदा उदार रहे, लेकिन अपनी कमियों को उन्होंने कभी क्षमा नहीं किया । उनका हृदय अत्यन्त संवेदनशील था । कहीं से भी कराह आती थी, तो वह विचलित हो उठते थे । किसीकी भी आँखों में आँसू देखते थे तो उनकी आँखें भर आती थीं । वह सच्चे अर्थों में वैष्णवजन थे ।

[वाद्य-ध्वनि । उसके थमते-थमते :]

स्त्री-स्वर : (लय के साथ)

वैष्णवजन तो तेने कहीए जे पीड़ पराई जाणे रे ।
परदु:खे उपकार करे तोये, मन अभिमान न आणे रे ।।
सकल लोकमां सहुने वंदे निन्दा न करे केनी रे ।
वाच काछ मन निश्चछल राखे, धन-धन जननी तेनी रे ।।
समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी, पर-स्त्री जेने मात रे ।
जिह्वा थकी असत्य न बोले, परधन नव झाले हाथ रे ।।
मोह माया व्यापे नहिं जेने, दृढ़ वैराग्य जेना मनमां रे ।
रामनामशुं ताली लागी, सकल तीरथ तेना तनमां रे ।।
वण लोभी ने कपट-रहित छे, काम-क्रोध निवार्या रे ।
भणे नरसैंयो तेनु दरसन करतां, कुल एकोतेर तार्या रे ।।

सूत्रधार : यह थी उनकी 'स्व' और 'पर' की कल्पना । वस्तुतः मानव उनके लिए सर्वोपरि था । उनका दृढ़ विश्वास था कि समाज की मूलभूत इकाई मनुष्य है । यदि उसका जीवन शुद्ध हो जायगा तो समाज अपने-आप ऊँचा उठ जायगा । मानव-जीवन की शुचिता के लिए उन्होंने अपने आश्रम के सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह आदि ग्यारह व्रतों के पालन का आग्रह रखा । प्रार्थना तो जैसे उनके जीवन का अभिन्न अंग थी । वह कहा करते थे :

स्त्री-स्वर : प्रार्थना या भजन जीभ से नहीं, हृदय से होता है । इसीसे गूँगे, तुतले और मूढ़ भी प्रार्थना

कर सकते हैं। जीभ पर अमृत हो और हृदय में हलाहल, तो जीभ का अमृत किस काम का ! कागज के गुलाब से सुगंध कैसे निकल सकती है ?

पुरुष-स्वर : भगवान् में उनकी अटूट श्रद्धा थी। पर उनके भगवान् मंदिरों में प्रतिष्ठित भगवान् न थे।

स्त्री-स्वर : वह कहा करते थे--मेरा ईश्वर तो मेरा सत्य और प्रेम है। नीति और सदाचार ईश्वर है, निर्भयता ईश्वर है। ईश्वर जीवन और प्रकाश का मूल है, फिर भी वह इन सबसे परे है। ईश्वर अंतरात्मा ही है। वह तो नास्तिकों की नास्तिकता भी है, क्योंकि वह अपने अमर्यादित प्रेम से उन्हें भी जीवित रहने देता है। वह हृदय से देखनेवाला है। वह बुद्धि और वाणी से परे है।

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर : आत्म-शोधन में व्रतों का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। अपने व्रतों में उन्होंने सत्य को सबसे ऊँचा माना।

स्त्री-स्वर : उन्होंने सत्य को परमेश्वर की संज्ञा से विभूषित किया।

पुरुष-स्वर : सत्य की महिमा का बखान करते हुए उन्होंने लिखा है :

गांधीजी : जो सत्य को जानता है, मन से, वचन से और काया से सत्य का आचरण करता है, वह परमेश्वर को पहचानता है। इससे वह त्रिकालदर्शी हो जाता है, उसे इसी देह में मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

पुरुष-स्वर : उन्होंने यह भी कहा :

गांधीजी : सत्य एक विशाल वृक्ष है। उसकी ज्यों-ज्यों सेवा की जाती है, त्यों-त्यों उसमें अनेक फल आते हुए दिखायी देते हैं। उनका अंत ही नहीं होता। ज्यों-ज्यों हम गहरे पैठते ह, उसमें से रस निकलते हैं, सेवा के अवसर हाथ आते रहते हैं।

पुरुष-स्वर : उन्होंने अहिंसा पर भी बड़ा जोर दिया। उनका विश्वास था कि अहिंसा सत्य की प्राण है। अहिंसा ही सत्येश्वर का दर्शन करने का सीधा और छोटा मार्ग है।

स्त्री-स्वर : पर उनकी अहिंसा निर्बलों की अहिंसा नहीं थी, वीरों की अहिंसा थी।

पुरुष-स्वर : उसे वह क्षत्रिय का धर्म मानते थे। कहते थे कि जो डरकर हिंसा नहीं करता, वह तो हिंसा कर ही चुका। चूहा बिल्ली के प्रति अहिंसक नहीं, उसका मन तो निरंतर बिल्ली की हिंसा करता रहता है, निर्बल होने के कारण वह बिल्ली को मार नहीं सकता। हिंसा करने की

पूरी सामर्थ्य रखते हुए भी जो हिंसा नहीं करता, वह अहिंसा-धर्म का पालन करने में समर्थ होता है। जो मनुष्य स्वेच्छा से और प्रेमभाव से किसीकी हिंसा नहीं करता, वही अहिंसा-धर्म का पालन करता है।

सूत्रधार : उनके लिए अहिंसा का अर्थ था प्रेम, दया, क्षमा। दक्षिण अफ्रीका में एक पठान ने उन पर घातक आक्रमण किया, उन्हें इतना पीटा कि वह मरणासन्न हो गये, लेकिन होश आने पर उन्होंने आग्रह किया कि उसको कोई दण्ड नहीं मिलना चाहिए और उन्होंने उसे दण्ड नहीं मिलने दिया।

स्त्री-स्वर : उनकी अहिंसा मनुष्यों तक ही सीमित नहीं थी। समस्त जीवधारियों तक व्याप्त थी। अपने आश्रम में उन्होंने नियम बना रखा था कि किसी भी जीव की हत्या न की जाय, यहाँ तक कि विषैले साँप-बिच्छू आदि की भी नहीं।

पुरुष-स्वर : उनकी अहिंसा वास्तव में बेजोड़ थी। उनकी करुणा का पार न था।

स्त्री-स्वर : उनकी पग-पग पर परीक्षा हुई, लेकिन वह चट्टान की तरह अडिग रहे।

पुरुष-स्वर : उनकी तेजस्विता दिन-दूनी रात-चौगुनी होती गयी।

स्त्री-स्वर : कितनी शक्तिशाली थी इस देश में अंग्रेजों की

हुकूमत। उसके पास फौजें थीं, संहारक अस्त्र थे। बाहरी बल के सभी साधन थे, लेकिन गांधीजी के आत्मिक बल के आगे उनकी एक न चली।

पुरुष-स्वर : गांधीजी के अस्त्र भी तो विलक्षण थे—सत्याग्रह, उपवास, असहयोग आदि-आदि। इनका प्रयोग वह इस प्रकार करते थे कि बड़ी-से-बड़ी भौतिक शक्ति भी दहल उठती थी।

स्त्री-स्वर : उनके हृदय में सबके लिए गहरी सद्भावना रहती थी। वह जिससे लड़ते थे, उसके लिए भी उनके हृदय में प्यार ही होता था।

पुरुष-स्वर : उन्होंने अंग्रेजी हुकूमत से मोर्चा लिया, लेकिन अंग्रेजों के प्रति कभी अपने मन में या व्यवहार में कटुता नहीं आने दी।

स्त्री-स्वर : वे मानते थे कि कोई भी व्यक्ति खुशी से बुराई नहीं करता। परिस्थितियाँ उसे वैसा करने के लिए विवश कर देती हैं।

सूत्रधार : दूसरों की भूलों के लिए वह स्वयं प्रायश्चित्त करते थे। दो व्यक्तियों की कमजोरी सामने आने पर उन्होंने पहली बार दक्षिण अफ्रीका में उपवास किया था। उन्होंने कहा था कि जिस आश्रम का संचालन वह करते हों, उसमें ऐसी बात का होना उनकी अपूर्णता को प्रकट करता है। आत्म-पीड़न तथा आत्म-शोधन के इस

हथियार का बाद में उन्होंने बहुत से अवसरों पर इस्तेमाल किया। कई बार तो उनका जीवन ही खतरे में पड़ गया, लेकिन प्रभु के हाथों में अपने को सौंपकर वह निश्चिन्त रहे।

स्त्री-स्वर : अपने देश की संस्कृति को वह बड़े आदर की दृष्टि से देखते थे।

पुरुष-स्वर : वह कहा करते थे :

गांधीजी : दुनिया में किसी संस्कृति का भण्डार इतना भरा-पूरा नहीं है, जितना हमारी संस्कृति का है। जिस तरह गंगा में अनेक नदियाँ आकर मिली हैं, उसी प्रकार इस देश की संस्कृतिरूपी गंगा में भी अनेक संस्कृतियों की सहायक नदियाँ आकर मिली हैं।

पुरुष-स्वर : वह यह भी कहते थे :

गांधीजी : इन सबका कोई सन्देश हमारे लिए हो सकता है तो यही कि हम सारी दुनिया को अपनायें, किसीको भी अपना दुश्मन न समझें।

पुरुष-स्वर : संसार की सभी संस्कृतियों, सभी धर्मों के प्रति उनकी दृष्टि समान आदर की थी।

स्त्री-स्वर : वह उन्हें मिलाकर एक करने के पक्षपाती नहीं थे।

पुरुष-स्वर : उनके लिए हर फूल का महत्त्व था।

स्त्री-स्वर : वह अनेकता में एकता के पोषक थे।

सूत्रधार : वह कहा करते थे कि मैं इस डर से अपने घर की खिड़कियाँ और किवाड़ बन्द नहीं करूँगा कि बाहरी हवा अन्दर आयेगी । मैं उसे अच्छी तरह से आने दूँगा । लेकिन मैं अपने पैर इतने मजबूत बनाये रखूँगा कि वह हवा उन्हें उखाड़ न सके । उन्होंने संसार की सारी संस्कृतियों को आदरभाव से देखा, सारे धर्मों के प्रति समभाव रखा ।

स्त्री-स्वर : उनके लिए धर्म का अर्थ मन्दिर की दीवारों में आबद्ध धर्म नहीं था । वह उस धर्म को मानते थे, जो जीवन को धारण करता है ।

पुरुष-स्वर : इसलिए उन्होंने खरे मानव को सदा प्रतिष्ठा दी ।

स्त्री-स्वर : उन्होंने धन के स्थान पर श्रम को बिठाया ।

पुरुष-स्वर : उन्होंने मनुष्य को पद से बड़ा माना और राजनीति को सदैव मानव-नीति के अधीन रखा ।

सूत्रधार : उन्होंने अपने देश की स्वाधीनता के लिए भारी संघर्ष किया, लेकिन स्वराज्य की उनकी कल्पना में शुद्ध-बुद्ध मानव का निर्माण ही प्रमुख रहा । उनकी स्वराज्य की परिभाषा थी 'स्व' अर्थात् अपने पर 'राज्य' । वह कहा करते थे कि जिसने अपने को जीत लिया, उसने जग को जीत लिया ।

स्त्री-स्वर : उन्होंने देख लिया था कि "विदेशी सत्ता के पैरों में पड़ा अवनत भारत कराहती मानवता को आशा का सन्देश नहीं दे सकता", उसकी पीड़ा को दूर नहीं कर सकता, इसीलिए उन्होंने उसे स्वतंत्र कराने की ठानी।

पुरुष-स्वर : उन्होंने जहाँ भी दुर्बलता देखी, उसे हटाने का प्रयास किया।

स्त्री-स्वर : उन्होंने दलितों को उठाया, हरिजनों को गले लगाया।

पुरुष-स्वर : उन्होंने ऊँच-नीच की दीवारें तोड़ीं।

स्त्री-स्वर : उन्होंने साम्प्रदायिकता पर प्रहार किया।

पुरुष-स्वर : उन्होंने स्त्रियों में साहस भरा।

स्त्री-स्वर : देश की बुनियाद को पक्का करने के लिए उन्होंने रचनात्मक कार्यों का जाल सर्वत्र फैलाया।

पुरुष-स्वर : उन्होंने विज्ञान को स्वीकार किया, लेकिन उसी हद तक कि वह मानव-श्रम को अकारथ न करे।

सूत्रधार : उन्होंने कोई भी क्षेत्र नहीं छोड़ा। देश के सर्वांगीण विकास के लिए उन्होंने कोटि-कोटि नर-नारियों के पुरुषार्थ को जागृत किया। देश में लोक-शक्ति का उदय हुआ। उसके आगे विदेशी सत्ता ठहर नहीं सकती थी। गुलामी की जंजीरें टूटीं। फिर भी उन्होंने यह नहीं

माना कि उनकी मंजिल आ गयी। उन्होंने कहा : "जब तक एक भी आँख में आँसू है, मेरे संघर्ष का अन्त नहीं हो सकता।"

स्त्री-स्वर : उन्होंने मानवता के सुख-दुःख के साथ अपने को एकाकार कर दिया।

पुरुष-स्वर : संसार के किसी भी कोने में वह पीड़ा को सहन नहीं कर सकते थे। उनकी एक ही कामना थी : जगत् के सभी प्राणी एक बड़े कुटुम्ब की भाँति प्रेम से रहें। न कोई किसीका शोषण करे, न अपना होने दे।

स्त्री-स्वर : न अन्याय-अत्याचार के आगे झुके, न किसीको झुकाये।

पुरुष-स्वर : वह दरिद्रनारायण के प्रतिनिधि बने।

स्त्री-स्वर : वह हर घड़ी भगवान् के सान्निध्य में रहते थे। उनकी प्रार्थना-सभा में उनके अंतर की कामना इन शब्दों में गूँज उठती थी :

पुरुष-स्वर : (**सस्वर पाठ**)

प्रभु तुम हरो जन की भीर।
द्रौपदी की लाज राखी, तुम बढ़ायो चीर।
भक्त कारण रूप नरहरि, धर्यो आप शरीर।
हरिनकश्यप मार लीन्हों, धर्यो नाहिन धीर।
बूड़ते गजराज राख्यो, कियो बाहर नीर,
दास मीरां लाल गिरधर, दुख जहाँ-तहाँ पीर॥

[वाद्य-ध्वनि]

सूत्रधार : भारत-भूमि बड़ी सौभाग्यशाली है, जिसने ऐसी विभूति को जन्म दिया। उन्होंने अपनी वाणी से और अपने कर्म से संसार के समक्ष ऐसे आदर्श प्रस्तुत किये, जो मानव-जाति का युग-युग तक मार्ग-दर्शन करते रहेंगे।

['रघुपति राघव राजा राम' की वाद्य-ध्वनि] ●

४ :: गांधीजी का अनशन-योग

[वातावरण की गंभीरता और व्याकुलता को व्यक्त करने के लिए वाद्य-स्वरों के उतार-चढ़ाव, मानो कोई अप्रत्याशित घटना हुई हो।]

पुरुष-स्वर १ : (**विस्मययुक्त चिन्ता से**) आपने सुना ? गांधीजी ने सात दिन के उपवास की घोषणा की है।... यह भी कहा है कि उसके बाद साढ़े चार महीने तक दिन में केवल एक बार भोजन करेंगे।

पुरुष-स्वर २ : (**व्यथित भाव से**) जी हाँ, मैंने सुना है। ऐसी बातें भला कहीं छिपी रहती हैं! फिनिक्स के बच्चे-बच्चे को इसका पता लग गया है। पर गांधीजी ने यह किया क्या है? ऐसा करते हमने पहले तो कभी किसीको सुना नहीं। (**अतिशय व्यग्रता से**) ओफ, कितना दुबला-पतला शरीर है उनका! इतने भारी बोझ को कैसे उठा पायेगा!

स्त्री-स्वर : (**काँपते हुए**) यही मैं सोचती हूँ। कितना कठिन है बिना कुछ खाये सात दिन तक रहना। भगवान् करें, इस अग्नि-परीक्षा से वह अच्छी तरह पार हो जायँ।

पुरुष-स्वर १ : (**सँभलकर**) लेकिन एक बात मेरी समझ में नहीं आयी। यह क्या कि गलती करे कोई और दण्ड भुगते कोई ! बुराई की आश्रम के एक लड़के और लड़की ने, किन्तु अनशन कर रहे हैं गांधीजी।

स्त्री-स्वर : इसमें समझ में न आनेवाली बात क्या है ! गांधीजी ने स्वयं ही इसका जवाब दिया है। उनका कहना है कि अपने संरक्षण में रहनेवालों की बुराई के लिए अभिभावक अथवा शिक्षक की भी तो जिम्मेदारी होती है। उनकी बात बिलकुल ठीक है। अपने ही घर में देख लो न ! कुछ भी होता है तो बात किस पर आकर पड़ती है ? घर के मुखिया पर। आश्रम में जो हुआ, उसमें गांधीजी को अपनी जिम्मेदारी दिखायी दी।

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने यह भी तो कहा है कि इस पतन के लिए मेरे प्रायश्चित्त करने पर ही पतित होनेवालों को मेरे दुःख की प्रतीति होगी और इससे उन्हें अपने दोष का भान और अनुमान होगा।

पुरुष-स्वर १ : उनका यह कथन बहुत सही है। जहाँ शुद्ध प्रेम का बन्धन होता है, वहाँ एक की बुराई से दूसरे को गहरी चोट लगती है, और जहाँ एक का दूसरे के लिए आदर-भाव होता है, वहाँ इस प्रकार का कदम अकारथ नहीं जाता।

सूत्रधार : यह था गांधीजी का प्रथम उपवास, जो उन्होंने सन् १९१३ में फिनिक्स आश्रम में किया था। आश्रम के एक छात्र और छात्रा के नैतिक पतन के पीछे, शिक्षक और आश्रम के मुखिया के नाते, उन्हें अपनी जिम्मेदारी दिखायी दी। उन्होंने कहा कि "मुझमें पाप न होता तो ऐसे पापी के पाप मैं क्यों न देख सकता ? पत्थर और हीरे का भेद जौहरी न कर सके तो वह जौहरी कैसा ? मैं जिस व्यक्ति को अपना मानता हूँ, अपने हृदय का प्रतिबिम्ब समझता हूँ, उसमें यदि असत्य है तो मुझमें भी असत्य होना ही चाहिए।"

स्त्री-स्वर : जी हाँ, यही थी उनकी मनोभूमिका, यही थी उनकी मान्यता, जिसने प्रायश्चित्त के रूप में उन्हें अपने प्राणों की बाजी लगा देने के लिए प्रेरित किया। फिर क्या था, उनके हृदय में जो ज्वाला धधक रही थी, वह शान्त हो गयी।

पुरुष-स्वर १ : (**संतोष से**) उनका मन बहुत ही हलका हो गया।

पुरुष-स्वर २ : और दोषियों पर जो क्रोध आया था, जो खीज हुई थी, वह दूर हो गयी।

स्त्री-स्वर : उन पर शेष रही दया और करुणा।

[सन्तोषबोधक वाद्य-ध्वनि। फिर कुछ देर स्तब्धता। अनन्तर हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि के उतार-चढ़ाव]

सूत्रधार : शुद्ध हृदय से किये गये प्रायश्चित्त का परिणाम मंगलकारी ही होना था। प्रभु की कृपा से अनशन अच्छी तरह पूर्ण हुआ। उसने सारे फिनिक्स में तहलका अवश्य मचा दिया, लोगों को उससे कष्ट भी हुआ, लेकिन उससे वातावरण की मलिनता दूर हो गयी, उसमें निखार आ गया।

स्त्री-स्वर : उसने लोगों की आँखें खोल दीं।

पुरुष-स्वर १ : लोगों की यह भी समझ में आ गया कि आदमी को बुराइयों का गुलाम नहीं होना चाहिए। इन्सान को परमेश्वर ने गड्ढे में गिरने के लिए नहीं बनाया। जीवन का उद्देश्य ऊँचाई पर जाना है।

पुरुष-स्वर २ : उनके अनशन ने लोगों के हृदय में उत्कट भावना पैदा की कि वे अपनी बुराइयों को देखें और उन्हें जीतने की कोशिश करें।

सूत्रधार : इस प्रकार गांधीजी के इस उपवास ने लोगों के दिलों पर गहरा प्रभाव डाला। उनमें अंत-र्मुखी होने और अपने जीवन को ऊर्ध्वगामी

बनाने की भावना प्रबल हुई । पर··गांधीजी की यह कसौटी अंतिम कसौटी नहीं थी। उन्हें बाद के अपने जीवन में कई बार उपवास करने पड़े। सत्य के मार्ग पर ज्यों-ज्यों उनके चरण बढ़ते गये, आत्मा की निर्मलता और ईश्वर के सान्निध्य की महिमा उनके हृदय में स्पष्ट होती गयी। सत्याग्रह के शस्त्रागार का उन्होंने अनशन एक अमोघ अस्त्र माना।

पुरुष-स्वर १ : पर वह सबके लिए अमोघ नहीं हो सकता था।

स्त्री-स्वर : उसका उपयोग सफलतापूर्वक वही कर सकता था, जिसकी भूमिका नैतिक और आध्यात्मिक हो।

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने कहा था कि "केवल शारीरिक योग्यता उपवास के लिए कोई योग्यता नहीं है। यदि ईश्वर में जीती-जागती श्रद्धा की योग्यता न हो तो दूसरी योग्यताएँ बिलकुल निरुपयोगी हैं। उपवास अंतरात्मा की गहराई में से उठना चाहिए।"

स्त्री-स्वर : उनके उपवास किसी महान् ध्येय के लिए होते थे।

पुरुष-स्वर १ : उनका हृदय निर्मल रहता था। किसीके भी प्रति दुर्भावना नहीं होती थी।

स्त्री-स्वर : तभी तो उनके उपवासों का इतना गहरा असर होता था।

पुरुष-स्वर २ : उनके उपवास से सारा देश व्याकुल हो उठता था।

सूत्रधार : गांधीजी ने जितने उपवास किये, उनका उद्देश्य भले ही प्रायश्चित्त करना हो अथवा अन्याय का निराकरण करना, उनकी भूमिका सदा नैतिक और आध्यात्मिक ही रही। भारत में सबसे पहला अनशन उन्होंने सन् १९१८ में किया, जो तीन दिन तक चला। अहमदाबाद की मिल के मजदूरों ने महँगाई-भत्ता बन्द कर दिये जाने पर, गांधीजी की सलाह से, हड़ताल की थी, लेकिन आगे चलकर मजदूर डिगने लगे। यह देखकर गांधीजी ने उनकी एक सभा में उपवास की घोषणा कर दी। मजदूरों को इसकी कल्पना भी नहीं थी। उपवास की घोषणा सुनकर वे दंग रह गये।

[भीड़ के स्वर, उत्तेजित वातावरण]

मजदूर १ : हम आपको उपवास नहीं करने देंगे।

मजदूर २ : उपवास आप नहीं, हम करेंगे।

[भीड़ में उत्तेजना बढ़ती है]

अनेक स्वर : (**एक साथ**) आप हमें क्षमा कीजिये। अपनी प्रतिज्ञा से पीछे नहीं हटेंगे, उस पर अडिग रहेंगे।

सूत्रधार : लेकिन गांधीजी नहीं माने, उन्होंने उपवास आरम्भ कर दिया। पर इस उपवास में शीघ्र

ही उन्हें एक दोष दिखायी दिया। मिल-मालिकों के साथ उनका बड़ा मधुर सम्बन्ध था। इसलिए उपवास उन पर बिना प्रभाव डाले नहीं रह सकता था। उनके विरुद्ध उपवास करना बल-प्रयोग गिना जाता। फिर भी गांधीजी ने सदा उपवास करना अपना धर्म माना।

[वाद्य-ध्वनि । थोड़ा विराम]

सूत्रधार : यह उपवास भी सकुशल पूरा हुआ। उसके फलस्वरूप वातावरण सुधरा और प्रेममय बना।

स्त्री-स्वर : लेकिन जिस अनशन ने सारे देश पर आश्चर्य-जनक प्रभाव डाला, वह था १९२४ का इक्कीस दिन का उपवास।

पुरुष-स्वर १ : ओफ, बड़े तूफानी दिन थे वे। देश की स्थिति बड़ी नाजुक हो गयी थी। हिन्दू-मुसलमानों के बीच चौड़ी खाई हो गयी थी।

स्त्री-स्वर : लोग एक-दूसरे के प्राणों के ग्राहक बन गये थे। चारों ओर भयंकर दंगे हो रहे थे।

पुरुष-स्वर २ : मानवता के अनन्य प्रेमी गांधीजी को इससे ठेस लगना स्वाभाविक ही था। मानव-मानव का हनन करनेवाली घटनाएँ उन्हें असह्य प्रतीत हुईं। पर वे क्या करें? मनुष्य का इतना

भयंकर, इतना विकृत रूप उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था। उन्होंने मार्ग खोजा, पर नहीं मिला। सहसा उन्होंने अनुभव किया कि जब किसीके सम्मुख कोई संकट उपस्थित हो और वह उसे हटा न सके तो उसे उपवास और प्रार्थना करनी चाहिए। उन्होंने इसी मार्ग का अवलम्बन किया। उन्होंने इक्कीस दिन के उपवास की घोषणा कर दी।

[जोर की वाद्य-ध्वनि]

सूत्रधार : उनके इस निश्चय से सारा देश काँप उठा।

पुरुष-स्वर १ : भारतीय नेता व्याकुल हो उठे।

पुरुष-स्वर २ : भारत के करोड़ों नर-नारी विह्वल होकर गांधीजी के स्वास्थ्य और दीर्घायु के लिए प्रार्थना करने लगे।

स्त्री-स्वर : और ब्रिटिश सरकार भी चिन्तित हो उठी।

सूत्रधार : उपवास समाप्त करने के लिए गांधीजी से बहुत आग्रह किया गया, लेकिन वे अपने निश्चय पर अटल रहे। उनकी अवस्था बीच में बड़ी चिन्ताजनक हो गयी, फिर भी वे अवधि से पहले उपवास छोड़ने को राजी न हुए। नेताओं के दिल काँपते थे, जनता का दिल उमड़ता था—कहीं कोई अनहोनी घटना न घट जाय! पर गांधीजी के मन में किसी प्रकार की चिन्ता न थी, उनके हृदय

में पूर्ण शान्ति थी। आखिर उपवास समाप्त हुआ, देश ने चैन की साँस ली।

पुरुष-स्वर १ : इस उपवास का फल यह निकला कि देश का पागलपन-भरा उन्माद दब गया।

स्त्री-स्वर : तूफान शान्त हो गया, दंगे बन्द हो गये।

पुरुष-स्वर २ : नेताओं ने आश्वासन दिया कि वे लोगों के फटे दिलों को एक करने के लिए, दूसरे सारे काम छोड़कर, जी-जान से प्रयत्न करेंगे।

पुरुष-स्वर १ : उसके बाद देश में भाईचारे के जो दृश्य देखे गये, उनकी स्मृति बड़ी मधुर थी।

सूत्रधार : पर इस इक्कीस दिन के उपवास के बाद बड़ा ही भयंकर तूफान आया सन् १९३२ में, जब कि ब्रिटिश सरकार द्वारा दलित-वर्ग को पृथक् निर्वाचन का अधिकार दिये जाने के विरुद्ध उन्होंने आमरण अनशन आरम्भ किया, यह उपवास आठ दिन चला और पूना-पैक्ट होने पर समाप्त हो गया, बहुत-से लोगों ने उपवास के औचित्य पर सन्देह प्रकट किया।

पुरुष-स्वर १ : उन्हें उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा : "ज्ञान और तप के लिए उपवास करने की प्रथा सनातन काल से चली आ रही है। ईसाइयों और इस्लाम में भी इसका साधारणतया पालन किया जाता है और हिन्दू-धर्म तो आत्म-

शुद्धि के लिए किये गये उपवासों के उदाहरणों से भरा पड़ा है।"

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने यह भी कहा, मैंने आत्म-शुद्धि की बड़ी चेष्टा की है और उसका नतीजा यह हुआ है कि मुझे अन्तर्नाद को ठीक-ठीक और साफ-साफ सुनने की क्षमता प्राप्त हो गयी है। मैंने यह प्रायश्चित्त उस अन्तर्नाद की आज्ञा के अनुसार किया है।

स्त्री-स्वर : लोगों ने कहा—उपवास तो दूसरों को धमकाना है।

पुरुष-स्वर १ : गांधीजी ने उत्तर दिया, "प्रेम विवश करता है, धमकाता नहीं है।"

सूत्रधार : इस तरह एक के बाद एक बहुत-से उपवासों की शृंखला गांधीजी के जीवन में मिलती है। कभी अस्पृश्यता-निवारण के लिए अनशन किया तो कभी जेल में भंगी का काम माँगने और जेल के अधिकारियों के इनकार कर देने पर किया, कभी आत्म-शुद्धि के लिए किया तो कभी प्रायश्चित्त के रूप में।

पुरुष-स्वर १ : आगे चलकर तो ऐसी स्थिति पैदा हो गयी कि जरा-सी कोई बात होती कि सारा देश व्यग्र हो उठता, कहीं बापू उपवास न कर बैठें।

स्त्री-स्वर : और लोग हृदय से प्रार्थना करते कि और कुछ भले हो जाय, लेकिन बापू उपवास न करें।

सूत्रधार : लोगों के अन्तःकरण की इस प्रार्थना के बावजूद बापू के समक्ष आगाखाँ महल में नजरबन्दी के दिनों में इक्कीस दिन का उपवास करने की लाचारी आ गयी। सन् १९४२ में जो हिंसात्मक प्रवृत्तियाँ देश में हुई थीं, उनके लिए सरकार ने गांधीजी और कांग्रेस को जिम्मेदार ठहराया। गांधीजी के लिए यह असह्य हुआ।

पुरुष-स्वर १ : गांधीजी उन दिनों बहुत दुर्बल थे। लोगों को डर हुआ कि कहीं इस बार का उपवास उनके लिए घातक न हो।

स्त्री-स्वर : लेकिन जिसका रक्षक भगवान् होता है, उसे कौन मार सकता है ?

पुरुष-स्वर २ : गांधीजी इस अग्नि-परीक्षा में भी उत्तीर्ण हुए।

सूत्रधार : पर अभी उनकी अंतिम परीक्षा बाकी थी। देश स्वतन्त्र हुआ, किन्तु दुर्भाग्य से चारों ओर घोर अशांति पैदा हो गयी। देश के बँटवारे ने लोगों के दिलों को भी टूक-टूक कर दिया, उनमें एक बार पुनः साम्प्रदायिक वैमनस्य की दुर्भावना उत्पन्न हो गयी। जगह-जगह पर दंगे हुए।

पुरुष-स्वर १ : उस समय गांधीजी शांति-दूत के रूप में एकाकी नोआखाली में पैदल घूम-घूमकर लोगों को प्रेम का और शांति का सन्देश सुना रहे थे।

स्त्री-स्वर : तभी उन्हें दिल्ली और पंजाब से दिल दहलाने-

वाले समाचार प्राप्त हुए। आग की लपटों को शान्त करने के लिए वह दिल्ली के लिए रवाना हुए।

पुरुष-स्वर २ : वह कलकत्ता आये, अकस्मात् वहाँ दंगे हो गये।

स्त्री-स्वर : गांधीजी की वेदना इतनी घनीभूत हो गयी कि उन्होंने अनिश्चित समय के लिए उपवास आरम्भ कर दिया।

पुरुष-स्वर १ : वह उपवास ७३ घंटे चला, लेकिन उसने चमत्कार कर दिखाया। कलकत्ता में पूर्ण शांति स्थापित हो गयी।

स्त्री-स्वर : (**व्यथित भाव से**) और तब गांधीजी वहाँ से रवाना होकर दिल्ली आये।

[वाद्य-ध्वनि]

सूत्रधार : हाँ, दिल्ली आये—उस दिल्ली में, जो पारस्परिक विद्वेष से अंधी हो रही थी और साम्प्रदायिक उन्माद की लपटों में धू-धू करके जल रही थी। गांधीजी ने अपने प्राणों को दाँव पर रख दिया। उनका यह अंतिम उपवास था, जो पाँच दिन तक चला। दिल्ली की ज्वाला शांत हो गयी, तूफान पर पर्दा पड़ गया। पर इसके कुछ दिन बाद ही जो न होना था, वह हो गया।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि] ●

५ :: बढ़ते कदम

[प्रारंभिक संगीत की पृष्ठभूमि में बहुत से कदमों के एक साथ बढ़ने का आभास]

उद्घोषक : (**उल्लाससूचक स्वर में**) बढ़ते कदम। बढ़ते कदम। ये कदम सूचक हैं देश के उस हौसले के, जिसके कारण लोकजीवन के हर क्षेत्र में आज प्रगति होती दिखायी दे रही है। इस प्रगति में बिना किसी भेद-भाव के सब शामिल हैं। जब से हमारा देश आजाद हुआ है, तब से सारे देशवासी तत्पर हो उठे हैं कि इस अभियान में कोई भी पीछे न रहे। पीछे रहने से जो देश की हानि हुई है, उसे वे अच्छी तरह से देख और भुगत चुके हैं। कुछ भाई पिछड़े रहे तो आखिर उसमें दोष हम लोगों का ही था। हमने अपनी ऊँच-नीच की भावना के कारण हरिजनों और आदिम जातियों को अपने से

अलग कर दिया और उनके साथ अमानुषिक व्यवहार किया। उसकी तीव्र वेदना आजादी की लड़ाई के आरम्भ में ही हमारे नेताओं ने, विशेषकर गांधीजी ने, अनुभव की।

[प्रार्थना के वातावरण की द्योतक वाद्य-ध्वनि, थोड़ी देर तक उतार-चढ़ाव। अनन्तर एक या कई व्यक्ति मिलकर गायें।]

सस्वर : **वैष्णवजन तो तेने कहीए जे पीड़ पराई जाणे रे।**
परदुःखे उपकार करे तोये, मन अभिमान न आणे रे॥

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : (**गंभीर स्वर में**) कितनी ऊँची कल्पना है श्रेष्ठ मानव की! (**थोड़ा रुककर**) वैष्णवजन तो तेने कहीए (**तनिक विराम**) जे पीड़ पराई जाणे रे। (**हलकी वाद्य-ध्वनि, फिर थोड़ी निस्तब्धता**) परदुःखे उपकार करे तोये···(**थोड़ा विराम**) मन अभिमान न आणे रे। इस भजन के एक-एक शब्द में मानो भारतीय संस्कृति की, मानवता की, मूल आत्मा समायी हुई है। कोई भी मनुष्य धर्म या जात से ऊँचा नहीं बनता। वैष्णव जन तो वह है, जो दूसरों की पीड़ा को अनुभव करता है, जिसके हृदय में औरों की व्यथा स्पन्दित होती है, जो किसीके भी दुःख-दर्द को सहन नहीं कर सकता, उसे दूर करने के लिए तत्काल दौड़ पड़ता है और

इतना करके भी जिसके मन में अभिमान पैदा नहीं होता।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि, उसके धीमे पड़ते-पड़ते]

स्त्री-स्वर : बात वास्तव में सही है। जन्म से कौन नीच और कौन ऊँचा होता है ? सबका जन्म एक ही तरह होता है। सबके शरीर हाड़-मांस के होते हैं और सबकी धमनियों में एक ही प्रकार का रक्त प्रवाहित होता है।

पुरुष-स्वर १ : प्रकृति ने भी सारे प्राणियों को एक-सी सुविधाएँ दी हैं।

पुरुष-स्वर २ : सूर्य सबको बिना भेदभाव के गर्मी देता है।

पुरुष-स्वर १ : चन्द्रमा सबको शीतलता प्रदान करता है।

पुरुष-स्वर २ : वर्षा सबको जल देती है।

स्त्री-स्वर : आदमी अपने गुणों से ऊँचा उठता है, अपनी करनी से बड़ा बनता है, लेकिन···लेकिन···

[अन्यायबोधक वाद्य-ध्वनि, उसके समाप्त होते ही]

ब्राह्मण : (**आवेश में**) नहीं-नहीं, मैं अपने कुएँ पर ढेड़-चमारों को हरगिज-हरगिज नहीं चढ़ने दूँगा। यह कुआँ मेरा है, मेरे घर का है, मेरे बाबा का खुदवाया हुआ है। बड़े आये हैं पानी लेनेवाले !

हरिजन : (**दयनीय वाणी में**) मालिक, हम क्या करें। हमारे बच्चे पानी के लिए तरस रहे हैं।

ब्राह्मण : (**कठोर स्वर में**) तरस रहे हैं तो हम क्या करें ! जा-जा, वहाँ गड्ढे में से पानी ले आ।

हरिजन : (**गिड़गिड़ाकर**) महाराज, गड्ढों में एक बूँद पानी नहीं है, गर्मी में सब सूख गया है ।

ब्राह्मण : सूख गया है तो सूख जाय, मेरा ही कुआँ रह गया है भ्रष्ट करने के लिए ! चल-चल, मेरे इस कुएँ से मन्दिर का पानी जाता है ।

[सिसकी की आवाज, वाद्य-ध्वनि से चीत्कार का बोध]

उद्घोषक : देखा आपने, यह था समाज का एक चित्र, एक समान होते हुए भी, मनुष्य द्वारा पैदा किये हुए भेद-भाव का एक नमूना। किसी जमाने में काम-काज की सुविधा के लिए मानव ने चार वर्ण बनाये थे, लेकिन आगे चलकर वही समाज के लिए बंधन बन गये। ऊँच-नीच की उन्होंने दीवारें खड़ी कर दीं, सबकी सेवा करनेवाले अछूत माने जाने लगे और सवर्णों द्वारा उनका तिरस्कार होने लगा। वे मानवोचित अधिकारों से वंचित हो गये, उनकी अवस्था दीन-हीन हो गयी। लेकिन हमारे संतों ने, हमारे ऋषियों ने, हमारे महापुरुषों ने कभी इस ऊँच-नीच के भेद को स्वीकार नहीं किया। हमारे धर्म-ग्रंथों ने उसकी भर्त्सना की।

[वाद्य-ध्वनि, उसके मंद पड़ते ही]

पुरुष-स्वर १ : स्वामी विवेकानन्द ने कहा—जो धर्म गरीबों का, पीड़ितों का, दुःख नहीं मिटाता, मनुष्य को देवता नहीं बनाता, वह भी क्या कोई धर्म

है ? जो जाति दूसरों से घृणा करती है, वह जीवित नहीं रह सकती ।

पुरुष-स्वर २ : रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा—जो धर्म मानव को अपमानित करता है, वह मिथ्या है । मनुष्य जहाँ कहीं भी मनुष्य को सतायेगा, वहीं उसकी सारी-की-सारी मानवता घायल होगी और वह घाव उसे मृत्यु की ओर घसीट ले जायगा ।

पुरुष-स्वर ३ : लोकमान्य तिलक ने कहा—अस्पृश्यता एक ऐसी रूढ़ि है, जिसका नाश होना ही चाहिए । जो अस्पृश्यता मरने पर नहीं रहती, जो परमेश्वर के घर जाने में रुकावट नहीं डालती, उसे अपने समाज में चलने देना परमेश्वर के प्रति पाप करने जैसा है ।

पुरुष-स्वर ४ : और आचार्य विनोबाजी ने बड़े पते की बात कही—क्या कोई ब्राह्मण मरता है तो उसका सोना होता है और हरिजन मरता है तो उसका लोहा होता है ? आखिर सबकी खाक ही होती है । हरिजन-परिजन का यह भेद तनिक भी नहीं रहना चाहिए ।

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : और इस महाव्याधि पर सबसे अधिक तीव्र प्रहार किया हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने । जब उन्होंने देखा कि देश के सात करोड़

निवासी धार्मिक, सामाजिक तथा आर्थिक दृष्टि से भयंकर स्थिति का सामना कर रहे हैं, उनकी आत्मा तिलमिला उठी। उन्होंने कहा—"जो धर्म अस्पृश्यता को मानता है, उसके अनुसार व्यवहार करता है, वह धर्म नहीं, अधर्म है और नाश के योग्य है। अस्पृश्यता हिन्दू-धर्म का अंग नहीं, बल्कि हिन्दू-धर्म में घुसी हुई सड़न है, वहम है, पाप है।" आगे उन्होंने यहाँ तक कहा—"मैं फिर जन्म लेना नहीं चाहता, पर अगर मेरा पुनर्जन्म हो तो मैं अछूत जातियों में पैदा होना चाहूँगा, जिससे मैं उनके दुःखों का साथी बन सकूँ, उनके कष्टों और अपमानों को भोगूँ और दुःखमय अवस्था से उनके उद्धार का यत्न करूँ।"

[तीव्र वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने हिन्दू-समाज के इस कलंक को मिटाने के लिए इक्कीस दिन का उपवास किया।

पुरुष-स्वर २ : वह नौ महीने तक सारे देश में घूमे और लोक-चेतना को जागृत किया।

पुरुष-स्वर ३ : उन्होंने अपने पत्रों का नाम 'हरिजन' रखा।

स्त्री-स्वर : और उन्होंने अपने को 'हरिजन' कहा।

पुरुष-स्वर ४ : हरिजन-प्रवास में उनकी सभाओं में विघ्न डाले गये, उन पर लाठियाँ बरसायी गयीं,

उनकी मोटर पर बम फेंकने का प्रयत्न किया गया, लेकिन वह अपने निश्चय से, अपने मार्ग से, तनिक भी विचलित न हुए।

[आशाबोधक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : सौभाग्य से उन्हें ठक्कर बापा जैसे सेवाव्रती और मानवता के अनन्य पुजारी मिल गये, जिन्होंने अपना सारा जीवन हरिजनों और दलितों के प्रति होनेवाले अमानुषी अन्याय और अत्याचार को मिटाने में लगा दिया। अपनी भारी-भरकम कमाई छोड़कर उन्होंने घोर तप आरम्भ किया। वह तप उनके जीवन के अन्तिम क्षण तक चलता रहा। सदियों से पिछड़े हुए अपमानित तथा शोषित हरिजनों को ऊपर उठाने और समाज में उन्हें सम्मान-पूर्ण स्थान दिलवाने में इन दो महापुरुषों तथा उनके संगी-साथियों ने जो कठोर साधना और तपश्चर्या की, वह मानवता के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगी।

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : उनका महायज्ञ बहुत-कुछ अंशों में सफल हुआ।

पुरुष-स्वर २ : स्थान-स्थान पर मंदिरों के द्वार हरिजनों के लिए खुल गये।

स्त्री-स्वर : कुएँ, तालाब और सड़कों का उपयोग उनके लिए सुलभ हुआ।

पुरुष-स्वर ३ : समाज में एक नयी चेतना उत्पन्न हुई।

[वाद्य-ध्वनि]

बालक : माँ, हम भंगी को क्यों नहीं छू सकते ?

माँ : क्योंकि वह मैला उठाता है।

बालक : तुम भी तो छोटे भैया की टट्टी साफ करती हो। तुम भी भंगिन हुई।

माँ : (**खीजकर**) नहीं, मैं भंगिन नहीं हुई, भंगी साफ कहाँ रहता है ?

बालक : साफ रहे तब भी तो हम उसे नहीं छू सकते। माँ, यह बात समझ में नहीं आती।

[वाद्य-ध्वनि]

गूँज : माँ बच्चे को नहलाती, धुलाती और साफ रखती है—बच्चा उसे प्रेम करता है।

डॉक्टर रोगी के घावों को धोकर उसकी मरहम-पट्टी करता है। रोगी डॉक्टर का कृतज्ञ होता है।

भंगी टट्टियाँ साफ करता है, नालियों की गन्दगी हटाता है, और हम उसे प्रेम की जगह घृणा करते हैं, उसे अछूत कहते हैं।

[वाद्य-ध्वनि के उतार-चढ़ाव]

उद्घोषक : देश में जब लोकप्रिय सरकारें बनीं तो उनका ध्यान विशेष रूप से इस ओर गया। हरिजनों का दर्जा ऊँचा हुआ, उन्हें अधिकार मिले। जब देश आजाद हुआ तो उस दिशा में बढ़ते चरणों

को और भी गति मिली। अस्पृश्यता-निवारण के कार्य में हरिजन सेवक संघ, भारतीय दलित वर्ग संघ, भारत दलित सेवक संघ, हरि-जन आश्रम आदि-आदि संस्थाओं को अधिक बल प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त भारत के संविधान में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम जातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों का शैक्षणिक एवं आर्थिक दृष्टि से उत्थान करने और उन पर लादी गयी परंपरागत सामाजिक असमर्थताओं का निराकरण करने के उद्देश्य से आवश्यक सुरक्षा एवं संरक्षण प्रदान करने की व्यवस्था की गयी। सन् १९५५ की १ जून से 'अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम' लागू हुआ।

पुरुष-स्वर १ : उसके अंतर्गत अस्पृश्यता के आधार पर किसी भी व्यक्ति के सार्वजनिक उपासना-स्थल पर जाने और वहाँ उपासना करने तथा आम तालाब, कुएँ आदि से पानी लेने पर रोक लगाना दंडनीय है।

पुरुष-स्वर २ : होटलों तथा चाय आदि की दूकानों पर हरिजन सबके समान भोजन और जलपान कर सकते हैं। धर्मशाला आदि स्थानों में सबके साथ ठहर सकते हैं और मनोरंजन के सभी स्थानों में आ-जा सकते हैं।

स्त्री-स्वर : अस्पतालों और शिक्षा-संस्थाओं में कोई किसी व्यक्ति के साथ भेद-भाव का व्यवहार नहीं कर सकता।

पुरुष-स्वर ३ : छुआछूत के कारण कोई किसीका किसी भी तरह बहिष्कार नहीं कर सकता।

पुरुष-स्वर ४ : जो ऐसे अपराध करेगा, उसे छह महीने की सजा अथवा पाँच सौ रुपये तक के जुरमाने का दंड अथवा दोनों ही दिये जायेंगे।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : इतना ही नहीं, संविधान के लागू होने के वाद से, सन् १९६० में दस वर्ष की अवधि के लिए अनुसूचित जातियों की जन-संख्या के आधार पर लोकसभा तथा राज्यों की विधान-सभाओं में स्थान सुरक्षित रखे गये हैं। अब यह अवधि आगे के लिए और बढ़ा दी गयी है। सरकारी नौकरियों में उन्हें सुविधाएँ दी गयी हैं। उनके हित के लिए परिषदें तथा बोर्ड स्थापित किये गये हैं। शिक्षा के प्रसार के लिए अनेक स्कूल, छात्रावास तथा पुस्तकालय खुले हैं। आर्थिक उन्नति के लिए जमीन, खेती-बारी के प्रसाधन, उद्योग-धंधे आदि की व्यवस्था की गयी है। इस कार्य के लिए विशेष रूप से एक आयुक्त की नियुक्ति हुई है।

पुरुष-स्वर १ : इन तथा ऐसे ही अन्य प्रयासों ने समाज की चेतना को प्रबुद्ध किया है।

पुरुष-स्वर २ : शिक्षा के प्रसार एवं आर्थिक विकास से हरिजन स्वयं जाग्रत हुए हैं।

स्त्री-स्वर : वे सम्मानपूर्वक जीने के लिए लालायित हो उठे हैं।

पुरुष-स्वर : अपमान के आगे न झुकने का उनमें साहस उत्पन्न हुआ है।

[आनन्दबोधक वाद्य-ध्वनि]

उद्‌घोषक : लीजिए, हरिजनों की बात करते-करते एक और महत्त्वपूर्ण समस्या का स्मरण हो आया और वह है आदिवासियों की। हमारे देश में आदिवासियों की संख्या लगभग सवा दो करोड़ है। वैसे तो वे सारे देश में फैले हुए हैं, लेकिन उनकी आबादी का बहुत बड़ा भाग आसाम, बिहार, महाराष्ट्र, गुजरात, उड़ीसा, मध्य-प्रदेश, पश्चिम बंगाल, मद्रास, राजस्थान आदि भागों में फैला हुआ है। ये लोग वनों में रहते हैं और देश की शेष आबादी से न केवल पृथक् हैं, बल्कि उनकी बहुत-सी बातें भिन्न हैं।

पुरुष-स्वर ३ : वे जंगलों में अपने सीधे-सादे घर बनाकर रहते हैं।

पुरुष-स्वर ४ : उनका रहन-सहन, उनके रीति-रिवाज बिल-कुल अलग हैं।

स्त्री-स्वर : वे बड़े सरल हैं, स्नेहशील हैं, आपस में मिल-जुलकर काम करते हैं।

पुरुष-स्वर १ : वे बड़े संतोषी हैं। खेतीबारी से उन्हें जो कुछ मिल जाता है, खा लेते हैं, कपड़े के नाम पर लाज ढँकने के लिए थोड़ा-सा टुकड़ा लपेट लेते हैं।

पुरुष-स्वर २ : अपनी आजादी उन्हें बहुत प्यारी है।

स्त्री-स्वर : उनकी अपनी कला है, उनकी अपनी संस्कृति है।

[आदिवासियों का कोई लोकगीत]

उद्घोषक : बड़े ही प्राणवान् लोग हैं वे। वनों की हरियाली, पक्षियों की चहचहाहट, नदियों और झरनों का कलकल निनाद उनके हृदय में मधुर संगीत की सृष्टि करता है। वे जनरव से दूर हैं, एकान्त में रहते हैं, लेकिन उनके अन्तर में वही स्पन्दन है, जो दूसरे लोगों के अन्दर है। वे पिछड़े हुए अवश्य कहलाते हैं, लेकिन उनकी अपनी परम्पराएँ हैं, जो बड़ी ही मूल्यवान् हैं।

पुरुष-स्वर ३ : पर वे शिक्षा में बहुत पिछड़े हुए हैं।

पुरुष-स्वर ४ : वे अनेक अंधविश्वासों के शिकार हैं।

स्त्री-स्वर : उनमें बहुत-से रोग घर किये हुए हैं और उचित उपचार के अभाव में उनकी बड़ी हानि होती है।

पुरुष-स्वर १ : वे बाबा आदम के जमाने में रहते हैं और उन्हें इस बात का पता ही नहीं कि दुनिया में क्या हो रहा है ।

पुरुष-स्वर २ : वे भयंकर पशुओं से नहीं डरते, लेकिन शहरी इंसान को देखकर उनकी रूह काँप उठती है ।

स्त्री-स्वर : वनों में रहते-रहते मानो वे भूल गये हैं कि उनके अपने लोक से बाहर भी कोई दुनिया है, जिसमें उनके भाई बसते हैं ।

उद्घोषक : ये वन-पुत्र भले ही भूल जायँ, लेकिन मानवता को प्यार करनेवाला महापुरुष उन्हें कैसे भूल सकता था ? महात्मा गांधी को तो सारा देश जगाना था, उसे उठाना था, खड़ा करना था और एक सूत्र में बाँधना था । वह कैसे सहन कर सकते थे कि देश के सवा दो करोड़ भाई समाज से कटकर अलग रहें, पिछड़े रहें और तेजी से बढ़ती दुनिया का उन्हें कुछ पता भी न रहे? उन्हें बिना साथ लिये भारत का पूरा विकास कहाँ संभव था ? आजादी का स्वप्न कहाँ पूर्ण होना था ? गांधीजी की पैनी निगाह ने आदिवासियों के सवाल के महत्त्व को शुरू में ही देख लिया और स्वराज्य-प्राप्ति के अपने कार्यक्रम का उसे प्रमुख अंग बनाया । उन्होंने कहा था, "जब तक एक

भी व्यक्ति पिछड़ा हुआ है, तब तक हमारी स्वराज्य की मंजिल अपूर्ण रहेगी।"

पुरुष-स्वर ३ : संयोग से उन्हें इस कार्य में तपस्वी ठक्कर बापा मिल गये और अछूतोद्धार के काम के शुरू होने के बाद कुछ ही समय में इस काम का भी श्रीगणेश हो गया।

पुरुष-स्वर ४ : ठक्कर बापा ने इस कार्य को उसी लगन और निष्ठा से उठा लिया, जिस तरह हरिजन-कार्य को उठाया था।

स्त्री-स्वर : उन्होंने कहा—जो ईश्वर पक्षियों को घोंसला बनाने की बुद्धि देता है, वह हमें भी जंगल में जाने की बुद्धि देगा।

पुरुष-स्वर १ : अपने निश्चय की दृढ़ता को व्यक्त करते हुए उन्होंने यहाँ तक कहा—मकान मिले तो अच्छा, नहीं तो बड़ के पेड़ के नीचे हमारी पाठशालाएँ चलेंगी।

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने आदिवासियों की गरीबी, निरक्षरता, सामाजिक कुरीतियों आदि को दूर करने के लिए कमर कस ली और अपने जीवन की प्रत्येक साँस मानव-मानव के बीच की खाई को पाटने के लिए अर्पित कर दी।

उद्घोषक : गांधीजी की मूल प्रेरणा और ठक्कर बापा के आवाहन पर देश के कोने-कोने से अनगिनत नर-नारी इस काम में जुट गये, देश के विभिन्न

भागों में संस्थाएँ बनीं और बड़ी तत्परता से इस दिशा में कार्य आरम्भ हुआ। पर यह काम आसान न था। आदिवासियों की आबादी ऐसे स्थानों पर थी, जहाँ जाने के लिए रास्ते नहीं थे और वहाँ पहुँचना बड़ा कठिन था। फिर जो लोग आदमी की शक्ल से भी घबराते थे, उन्हें अपनी ओर खींचना और भी मुश्किल था। लेकिन ठक्कर बापा और उनके संगी-साथियों की सेना तनिक भी नहीं घबरायी। ज्यों-ज्यों उनकी परीक्षा होती गयी, वे और तपते गये। विदेशी सत्ता ने इन आदिम जातियों को पृथक् करके रखने की नीति अपनायी थी। नतीजा यह हुआ था कि जमींदारों, साहूकारों तथा ठीकेदारों ने वहाँ पहुँचकर उनका शोषण करना आरम्भ कर दिया। उसके विरुद्ध अनेक स्थानों पर आदिवासियों ने कई बार विद्रोह किया, लेकिन उन्हें दबा दिया गया।

पुरुष-स्वर ३ : भारत के आजाद होने से पहले ब्रिटिश शासन ने उनकी स्थिति को जैसे-का-तैसा बनाये रखा।

पुरुष-स्वर ४ : उनके बीच बहुत-से विदेशी मिशनरी काम करने गये। उनमें से बहुतों ने सराहनीय कार्य किया, लेकिन उनमें से अधिकांश ऐसे लोग थे, जिन्होंने ब्रिटिश नीति को पोषण देकर उनका धर्म-परिवर्तन करने के अपने प्रच्छन्न

ध्येय की पूर्ति के लिए उन्हें अलग रखवाने में सहायता दी।

स्त्री-स्वर : पर इन विदेशी लोगों में कुछ ऐसे सदाशयी व्यक्ति भी थे, जो आदिवासियों को दिल से चाहते थे, उनकी कला और संस्कृति के परम उपासक थे और जिनकी हार्दिक इच्छा थी कि उन लोगों की अवस्था सुधरे और वे पिछड़े न रहकर शेष दुनिया के समान हों।

पुरुष-स्वर १ : कई ब्रिटिश अधिकारियों ने भी इस दिशा में अच्छा काम किया।

स्त्री-स्वर : देश में जब पहली बार लोकप्रिय सरकारें स्थापित हुईं, तो इस कार्य को अधिक गति मिली। इस कार्य में संलग्न संस्थाओं को प्रोत्साहन दिया गया।

उद्घोषक : इस प्रकार आदिम जातियों की स्थिति में सुधार का यह महत्त्वपूर्ण कार्य आगे बढ़ता गया। उन लोगों में शिक्षा का प्रचार किया गया। खेती-बारी में सहायता दी गयी। उनको साहूकारों के चंगुल से निकालने का प्रयत्न किया गया। उनकी बस्तियों तक पहुँचने के लिए रास्ते बनाये गये। लेकिन इस दिशा में विशेष कदम उठे भारत के आजाद होने के बाद।

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर २ : विभिन्न प्रान्तों में जो संस्थाएँ काम कर रही

थीं, उनको लेकर 'भारतीय आदिम जाति सेवक संघ' की स्थापना की गयी।

पुरुष-स्वर ३ : भारतीय संविधान में स्वीकार किया गया कि आदिम जातियों के आर्थिक तथा शैक्षणिक हितों को संरक्षण दिया जाय।

स्त्री-स्वर : सरकारी नौकरियों में उनका विशेष ध्यान रखा गया।

पुरुष-स्वर ४ : संसद् तथा राज्य विधान-मंडलों में उनके प्रतिनिधित्व की सुविधा की गयी।

पुरुष-स्वर १ : उनके कल्याण तथा हितों की सुरक्षा के उद्देश्यों से राज्यों में सलाहकार परिषदों तथा पृथक् विभागों की स्थापना की गयी।

स्त्री-स्वर : अनुसूचित या आदिम जातीय क्षेत्रों के प्रशासन तथा नियंत्रण के लिए विशेष प्रबन्ध किया गया।

पुरुष-स्वर २ : संविधान में की गयी सुरक्षा-सम्बन्धी व्यवस्था की जाँच-पड़ताल करने तथा उसको कार्यरूप में परिणत करने के सम्बन्ध में एक आयुक्त की नियुक्ति की गयी।

पुरुष-स्वर ३ : विभिन्न राज्यों में 'कल्याण-विभाग' स्थापित किये गये।

स्त्री-स्वर : पहली पंचवर्षीय योजना में पिछड़े वर्ग के विकास-कार्य के लिए लगभग २० करोड़ रुपये की व्यवस्था की गयी थी। दूसरी पंचवर्षीय योजना में इस कार्य के लिए लगभग ४४

करोड़ की राशि रखी गयी और तीसरी पंच-वर्षीय योजना में आदिवासियों के लिए कोई ६१ करोड़ की और हरिजन विमुक्त जाति आदि को मिलाकर ११४ करोड़ की व्यवस्था रखी गयी ।

पुरुष-स्वर ४ : इस योजना के अनुसार आदिवासियों की आर्थिक उन्नति के लिए सहकारी समितियों का संगठन, भूमि-सुधार, बाँध बाँधना, उत्तम बीज तथा खेती के अच्छे औजार दिलाना, पशु-संवर्द्धन, कुटीर-उद्योग आदि की व्यवस्था की गयी।

पुरुष-स्वर १ : शिक्षा के लिए पाठशालाएँ, छात्रावास आदि खोले गये, छात्रों को वजीफे दिये गये।

स्त्री-स्वर : चिकित्सा, यातायात आदि सभी क्षेत्रों में उनके बहुमुखी विकास के लिए प्रयत्न किये गये।

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : इसमें कोई सन्देह नहीं कि गांधीजी तथा ठक्कर बापा ने जो बीज बोया था, वह उनके सेवानिष्ठ व्यक्तियों तथा शक्तियों के पोषण से लगातार बढ़ता जा रहा है। आदिवासियों में नयी जाग्रति उत्पन्न हुई है । आशा का संचार हुआ है । उनका सिमटा संसार व्यापक बना है। शिक्षा में उनकी रुचि बढ़ी है और अब उनके युवक और युवतियाँ उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं और

उनमें से बहुत-से अपनी प्रतिभा से अपनी जाति का नाम ऊँचा कर रहे हैं। शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ अब इन लोगों के अन्तर के पट भी खुलते जा रहे हैं।

[हलकी वाद्य-ध्वनि]

मुखिया : (**ऊँचे स्वर में**) नहीं-नहीं, तुम्हें अपने पिता का मरण-भोज करना पड़ेगा। बिना उसके तुम्हारी शुद्धि नहीं हो सकती। मृत आत्मा को शान्ति नहीं मिल सकती। हम ऐसा पाप नहीं होने देंगे।

भील : (**करुण स्वर में**) मुखियाजी, मैं बड़ा लाचार हूँ। आपको क्या पता नहीं है कि अकाल में मेरी दोनों गायें मर गयीं। दुर्भाग्य से मेरा कुआँ भी ढह गया। मेरे पास अब एक कौड़ी भी नहीं है।

मुखिया : कौड़ी भी नहीं है तो हम क्या करें, जमीन गिरवी रखकर पैसा ले लो। मकान किसी-को दे दो।

भील : नहीं मुखियाजी, मैं ऐसा नहीं कर सकता। मैं कर्ज नहीं ले सकता। कितनों को मैंने देखा है कि कर्ज लिया कि डूबे और मरे। नहीं-नहीं, यह मेरे बूते का नहीं है।

मुखिया : तुम देख लो, तुम्हारी मुसीबत हो जायगी।

भील : मुसीबत होगी तो हो जाय। मैं कर्ज लूँगा तो कुएँ की मरम्मत कराऊँगा, गायें खरीदूँगा।

मुखिया : (**क्रोध में**) तुम्हारा इस गाँव में रहना मुश्किल हो जायगा, समझे।

उद्घोषक : लेकिन वाह रे मनजी भील। मुखिया की चुनौती से वह जरा भी नहीं घबराया। उसने पैसे का प्रबन्ध किया, पर उससे कुआँ ठीक किया, अच्छा बीज खरीदा, बोया और बढ़िया फसल पैदा की। जिन्होंने उसे चुनौती दी थी, वही उसके पराक्रम से गद्गद हो गये। वह पिछड़ी जाति का था, पर उसे अन्तर का प्रकाश मिला और वह मुसीबत से बच गया। ऐसी बीसियों मिसालें हैं।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : भारतीय संविधान के ३३९ अनुच्छेद के अनुसार राष्ट्रपति ने २८ अप्रैल १९६० को कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री ढेबर की अध्यक्षता में एक कमीशन की नियुक्ति की थी। उसका काम अनुसूचित जातियों की स्थिति की जाँच करके उनकी समस्याओं पर अपनी रिपोर्ट देना था। इस कमीशन ने देश के विभिन्न भागों में फैली हुई इन आदिम जातियों की समस्याओं का सब पहलुओं से अध्ययन करके अपनी विस्तृत रिपोर्ट पेश कर दी।

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : पर अस्पृश्यता-निवारण की भाँति यह समस्या भी बड़ी कठिन है। हर्ष की बात है कि सारे देश का ध्यान उस ओर चला गया है।

पुरुष-स्वर २ : यह समस्या एक दिन सुलझकर ही रहेगी। कोई भी समाज अथवा जाति पिछड़ी नहीं रहेगी, लेकिन आवश्यकता इस बात की है कि आदिम-जातियों के लिए जो कुछ किया जाय, उसमें उनके स्वाभिमान की रक्षा हो।

स्त्री-स्वर : राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने ठीक ही कहा है कि हम यह भावना लेकर उनके पास न जायँ कि हमें उनका उद्धार करना है। सेवक की विनम्रता इस काम के लिए बड़ी जरूरी है।

पुरुष-स्वर ३ : यह भी जरूरी है कि उनकी कला और संस्कृति की विशेषता को भी हानि न पहुँचे। उनसे भारतीय कला और संस्कृति का भंडार समृद्ध होगा।

पुरुष-स्वर ४ : उनके पर्व और त्योहार हमें एक नये प्रकार का रस देंगे। भारतीय जीवन उनसे और भी श्रीसम्पन्न बनेगा।

उद्घोषक : देश अपनी मंजिल पर बराबर बढ़ता जा रहा है, बढ़ता जा रहा है। उसके मार्ग में कठिनाइयाँ हैं, पर जिस प्रकार नदी की धारा चट्टानों की बाधा से अधिक प्रखर बनती है,

उसी प्रकार हमारे मार्ग की बाधाएँ हमारी गति को अधिक तीव्र बनाने में ही सहायक होंगी। उपनिषद् में कहा गया है कि बैठे हुए का भाग्य बैठा रहता है, खड़े होनेवाले का सौभाग्य खड़ा हो जाता है, पड़े रहनेवाले का सौभाग्य पड़ा रहता है और उठकर चलनेवाले का सौभाग्य चल पड़ता है। इसलिए चलते रहो, चलते रहो। देश की चेतना ने इस सत्य को भलीभाँति समझ लिया है और सारे देशवासी लोक-कल्याण के लक्ष्य की ओर कदम-से-कदम मिलाकर बढ़ते जा रहे हैं, बढ़ते जा रहे हैं।

[सामूहिक कदमों का आभास और कोई उपयुक्त सामूहिक गान] ●

६ :: 'जीओ और जीने दो' के मन्त्रदाता

[हलकी वाद्य-ध्वनि : उसकी पृष्ठभूमि में]

गूँज : **अज्झत्थं सव्वओ सव्वं, दिस्स पाणे पियायए ।**
न हणे पाणिणो पाणे भयवेराओ उवरए ।।

[आशासूचक वाद्य-ध्वनि : उसके मन्द पड़ते-पड़ते]

पुरुष-स्वर : आनेवाले सुखों या दुःखों का मूल अपने ही अन्दर है, ऐसा जानकर भय और वैर से निवृत्त साधक का कर्तव्य है कि जीवन के प्रति मोह-ममता रखनेवाले सब प्राणियों को सर्वत्र अपनी ही आत्मा के समान जानकर उनकी कभी भी हिंसा न करे।

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : (**गम्भीर स्वर में**) सुखों और दुःखों का मूल अपने अन्दर है···सब प्राणियों को अपने समान समझो···कभी भी हिंसा न करो··· (**अल्प विराम**)। ···कितना सुन्दर है यह

सन्देश, कितना लोकहितकारी, कितना प्रेरणा-दायक ! ऐसा प्रतीत होता है, मानो किसी महापुरुष ने मानव-जीवन को सार्थक बनाने का मूलमंत्र दे दिया है । जानते हैं, इस मंत्र के दाता कौन थे ? वह थे जैनधर्म के चौबीसवें तीर्थंकर महावीर, जिनका आविर्भाव आज से ढाई हजार वर्ष पूर्व हुआ था, लेकिन जिनके उपदेश आज भी उतने ही ताजा हैं, जितने उस समय थे ।

पुरुष-स्वर १ : जिस समय वह इस भूमि पर अवतरित हुए थे, चारों ओर गहन अंधकार छाया था, हिंसा का बोलबाला था ।

पुरुष-स्वर २ : यज्ञों में पशुओं की बलि दी जाती थी । लोग मानते थे कि यज्ञ की वेदी को खून से जितना लाल किया जायगा, उतना ही अधिक पुण्य मिलेगा ।

पुरुष-स्वर ३ : सामाजिक नियम नष्ट-भ्रष्ट हो चुके थे । आचार-विचार का कोई मूल्य नहीं रहा था । बुरी-बुरी रूढ़ियाँ समाज में घर कर गयी थीं ।

पुरुष-स्वर १ : वर्णभेदों की जड़ें गहरी हो गयी थीं । लोग अपने-अपने तंग दायरों में सीमित हो गये थे : उनमें ऊँच-नीच का भाव पैदा हो गया था ।

पुरुष-स्वर २ : स्वार्थ के वशीभूत होकर लोग दूसरों के हितों

पर प्रहार कर रहे थे। उनके दिलों से प्रेम का लोप हो गया था।

पुरुष-स्वर ३ : समाज का राजदण्ड अत्याचार के हाथ में जा पड़ा था और सत्ता अहंकार तथा महत्त्वाकांक्षा की दासी बन गयी थी।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : कहते हैं, जब-जब इस धरा पर धर्म की हानि होती है, तब-तब कोई-न-कोई महापुरुष जन्म लेता है और समाज का उद्धार करता है। उस काल की महाव्याधियों को दूर करने के लिए वैशाली गणतंत्र के कुण्ड-ग्राम में एक बालक पैदा हुआ। उसके जन्म से पिता सिद्धार्थ और माता त्रिशला तो हर्षित हुईं ही, सारे राज्य में आनन्द की लहर दौड़ गयी।

[हर्षबोधक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : जब से बालक गर्भ में आया था, तभी से परिवार की सुख-समृद्धि में वृद्धि होती रही थी।

पुरुष-स्वर २ : बालक का विकास पूर्णिमा के चन्द्रमा की भाँति होने लगा था।

पुरुष-स्वर ३ : इसलिए उसका नाम वर्द्धमान रखा गया। बालक बड़ा हुआ। एक दिन कुछ बच्चे बस्ती से बाहर खेल रहे थे।

[बच्चों का कोलाहल। उसके धीमे पड़ने पर]

बालक १ : **(विस्मय से)** अरे, उधर देखो, वह क्या है ?

बालक २ : (**डर से काँपती आवाज में**) साँप···साँप···, भागो···भागो।

बालक ३ : ओफ, कितना काला है वह ! कितना भयंकर !

बालक ४ : उसका फन देखकर जान सूखती है। जीभ को ऐसे लपलपाता है कि सबको खा जायगा।

[बालकों के भागकर दूर चले जाने की आवाज]

वर्द्धमान : (**निडर स्वर में**) अरे, तुम लोगों को यह क्या हो गया है ? साँप है तो है, इसमें डरने की क्या बात है !

[आगे बढ़ने की चाप]

कई बालक : (**घबराकर**) ओ वर्द्धमान, यह क्या करते हो ? उधर मत जाना, साँप तुम्हें डस लेगा।

[वर्द्धमान के हँसने का स्वर]

वर्द्धमान : नहीं, वह मुझे नहीं डसेगा, नहीं डसेगा।

उद्घोषक : वर्द्धमान मुसकराते हुए बेधड़क उस विषधर की ओर बढ़े और पास जाकर उसका मुँह पकड़ लिया। फिर दूर जाकर उसे छोड़ आये। उनके साथी चकित रह गये। घर के लोगों को मालूम हुआ तो उनके प्राण मुँह को आ गये। छोटी उम्र में बालक का वह साहस वास्तव में अद्भुत था। उन्होंने उस दिन से बालक का नाम महावीर रख दिया। उसकी तेजस्विता को देखकर पिता की इच्छा हुई कि बड़े होने पर वह राजपाट सँभालेगा तो उनका नाम

ऊँचा होगा, लेकिन महावीर की रुचि राजपाट और उसके वैभव में नहीं थी। उनकी लौ तो कहीं और ही लगी थी।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : पिता ने बड़ी ममता से उनका लालन-पालन किया और भरपूर कोशिश की कि उनका मन राजकाज में लगे।

पुरुष-स्वर २ : लेकिन उस छोटी उम्र में ही महावीर देख रहे थे कि लोग धर्म के असली मर्म को भूलकर कर्मकाण्ड में फँस गये हैं। उन्हें यह देखकर बड़ी वेदना होती थी कि लोग जान-बूझकर गड्ढे में गिर रहे हैं।

पुरुष-स्वर ३ : जिस प्रकार दुनिया के दुःखों को देखकर गौतम बुद्ध का मन संसार से हट गया था, उसी प्रकार महावीर भी बुराइयों को देखकर दुनिया से उदासीन हो गये।

पुरुष-स्वर १ : वह ऐसा सुख चाहते थे, जो मनुष्य के जीवन को सदा हरा-भरा रखे और जिसके मिल जाने पर और कुछ पाने की चाह न रहे।

[वाद्य-ध्वनि : उसके उतार-चढ़ाव के बाद]

उद्घोषक : जब महावीर २८ वर्ष के हुए, तो उनके माँ-बाप का बिछोह हो गया। महावीर के एक बड़े भाई थे, नन्दिवर्द्धन। वह बड़े दुखी हुए, लेकिन महावीर पर माता-पिता के जाने का कोई

असर न पड़ा। उन्होंने बड़े भाई को समझाकर कहा कि जीना और मरना तो संसार का नियम है। उसके लिए शोक क्या करना। महावीर दो साल घर में और रहे। उसके बाद वह तीस वर्ष की आयु में घरबार छोड़कर जंगल में चले गये।

[विषादभरी वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : अब उन्हें किसीसे न राग था, न द्वेष।

पुरुष-स्वर २ : वह बालक की भाँति निर्मल और निर्विकार हो गये।

पुरुष-स्वर ३ : वन में उन्होंने बड़ी कठोर तपस्या की।

पुरुष-स्वर १ : जो मिल जाता, खा लेते।

पुरुष-स्वर २ : जहाँ जगह मिल जाती, पड़ रहते।

पुरुष-स्वर ३ : तन पर उनके कपड़ा नहीं था। बच्चे उन्हें नंगा देखकर उन पर धूल फेंकते, पत्थर मारते।

उद्घोषक : लेकिन महावीर धीरज से सब सहते रहे, सहते रहे। उनको शरीर की सुधि नहीं थी। वह शरीर को आराम पहुँचानेवाली सब चीजों का त्याग कर चुके थे। बारह वर्ष तक उनकी तपस्या इसी प्रकार चलती रही। इन वर्षों में उन पर क्या-क्या बीती, किन-किन मुसीबतों का उन्हें सामना करना पड़ा, इसकी कहानियाँ सुनकर दिल दहल उठता है। एक बार घूमते

हुए वह एक गाँव में पहुँचे। वहाँ एक यक्ष रहता था। वह किसी और का वहाँ रहना सहन नहीं कर सकता था। लोगों ने महावीर को समझाया कि वह वहाँ न जायँ, लेकिन वह नहीं माने। रात को यक्ष आया।

[किसीके जोर से आने का स्वर]

यक्ष : (**क्रोधभरे स्वर में**) तू कौन है ?

[खामोशी]

यक्ष : (**गरजकर**) अरे, बोलता क्यों नहीं ? यहाँ मेरा राज्य है। तूने यहाँ आने की कैसे जुर्रत की ?

[खामोशी]

उद्घोषक : कहते हैं, जब यक्ष ने देखा कि महावीर पर उसके क्रोध का कोई प्रभाव नहीं पड़ा तो वह साँप बन गया और लगा उन्हें बार-बार काटने। महावीर फिर भी अडिग रहे। अन्त में यक्ष ने समझ लिया कि वह कोई सामान्य व्यक्ति नहीं हैं। वह उनके पैरों पर गिर पड़ा और उनसे क्षमा माँगने लगा। महावीर ने कहा :

महावीर : हे यक्ष, जिस प्रकार तुम्हारे आत्मा है, उसी प्रकार दूसरों के भी है। इस बात को समझो और किसीको भी दुःख न पहुँचाओ।

यक्ष : प्रभो, मैंने अपने जीवन में बड़े पाप किये हैं।

महावीर : उनके लिए पश्चात्ताप करो और आगे के लिए

संकल्प करो कि कोई पाप नहीं करोगे। इसीसे तुम्हारा कल्याण होगा।

[कल्याणबोधक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : एक बार एक ग्वाले ने उन्हें बहुत सताया। इन्द्र आये। उन्होंने महावीर की रक्षा करना चाहा, लेकिन महावीर ने इनकार कर दिया। उन्होंने कहा :

महावीर : आप चिन्ता न करें। साधक किसीकी मदद नहीं लेते। वे अपना बचाव आप कर लेते हैं।

[आनन्दकारी ध्वनि]

उद्घोषक : कुन्दन बनने के लिए सोने को तपना पड़ता है। महावीर की भी बड़ी कड़ी कसौटी हुई। बारह वर्ष बाद उनकी तपस्या सफल हुई। एक दिन, एक नदी के किनारे, शाल वृक्ष के नीचे, उन्हें 'केवल-ज्ञान' प्राप्त हो गया। वह जन्म-मरण, शोक-संताप, सुख-दुःख और संसार के मायाजाल से मुक्त हो गये।

[आनन्ददायक वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर १ : इसके बाद वह एक जगह नहीं रहे। तीस वर्ष तक बराबर घूमकर उपदेश देते रहे।

पुरुष-स्वर २ : उनकी धर्म-सभा में हर आदमी आ सकता था। उनके लिए आदमी-आदमी के बीच किसी प्रकार का भेदभाव नहीं था।

पुरुष-स्वर ३ : वह कहते थे :

महावीर : हर व्यक्ति जीना चाहता है। सबको अपना-अपना जीवन प्यारा है। सब सुखी रहना चाहते हैं। दुःख से दूर रहना चाहते हैं। इसलिए किसी भी प्राणी को मनसा-वाचा-कर्मणा कष्ट नहीं पहुँचाना चाहिए।

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने अहिंसा को परम धर्म माना और कहा :

महावीर : अहिंसा से ही मनुष्य सुखी हो सकता है। अहिंसा से ही संसार में शान्ति बनी रह सकती है।

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने अहिंसा का मर्म समझाते हुए कहा :

महावीर : अपनी बुराइयों को जीतना, अपनी इंद्रियों पर काबू रखना और किसी भी चीज से मोह न करना ही सच्ची अहिंसा है।

पुरुष-स्वर ३ : अहिंसा के साथ-साथ उन्होंने संयम, तप और त्याग पर बड़ा जोर दिया।

पुरुष-स्वर १ : बारह वर्ष के कठोर तप के बाद अपनी अनुभूति से उन्होंने सीख दी।

महावीर : सबसे पहले अपने को कसो, अपने को शुद्ध बनाओ।

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने पाँच महाव्रत की महिमा बतायी :

महावीर : किसी भी जीव को न सताओ, सदा सच बोलो, चोरी न करो, संयम रखो और आवश्यकता से अधिक चीजें न बटोरो और उन चीजों के मोह-जाल में न फँसो।

पुरुष-स्वर ३ : उन्होंने यह भी कहा :

महावीर : दुनिया में दुःख की जड़ मनुष्य का अहंकार है, अर्थात् मनुष्य मानता है कि वह जो कहता है, वही सही है। इससे बड़े झगड़े होते हैं।

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने दुनिया को एक अत्यन्त उपयोगी सिद्धान्त दिया, जिसे अनेकान्त कहते हैं।

पुरुष-स्वर २ : इसका अर्थ है कि हम जो कहते हैं, वही सच नहीं है। दूसरे जो कहते हैं, उसमें भी सचाई है। एक ही चीज के कई पहलू होते हैं। लोग चीजों को अपने पहलू से देखते हैं और अपनी बात कहते हैं। इसलिए किसीको मताग्रह नहीं रखना चाहिए।

पुरुष-स्वर ३ : लेकिन उनका सबसे बड़ा मंत्र था : 'जीओ और जीने दो', अर्थात् मनुष्य अपनी तरह दूसरों का भी ध्यान रखे और उन्हें वे सब सुविधाएँ दे, जो वह अपने लिए चाहता है।

[प्रेरणादायक वाद्य-ध्वनि]

गूँज : **आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ।**

[वाद्य-ध्वनि : उसीकी पृष्ठभूमि में]

पुरुष-स्वर १ : जिस चीज को तुम अपने प्रतिकूल मानते हो, उसका आचरण दूसरों के प्रति न करो।

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर २ : उनका कहना था :

महावीर : मानव-मानव एक समान हैं। सबको आत्मोन्नति करने का अधिकार है। मनुष्य की श्रेष्ठता का आधार जन्म नहीं, गुण है और गुणों के आधार पर ही मनुष्य का जीवन सार्थक बनता है।

पुरुष-स्वर ३ : उन्होंने अपने उपदेश बड़ी ही सरल और सुबोध भाषा में दिये।

महावीर : जिस तरह मूर्ख गाड़ीवान जान-बूझकर साफ-सुथरे रास्ते को छोड़कर ऊँचे-नीचे, ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर जाता है और गाड़ी की धुरी टूट जाने पर शोक करता है, उसी तरह मूर्ख मनुष्य धर्म को छोड़कर अधर्म ग्रहण कर, अन्त में मौत के मुँह में पड़कर, जीवन की धुरी टूट जाने पर शोक करता है।

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने यह भी कहा :

महावीर : जो मनुष्य प्राणियों की स्वयं हिंसा करता है, दूसरों से करवाता है और हिंसा करनेवालों का अनुमोदन करता है, वह संसार में अपने लिए वैर बढ़ाता है।

पुरुष-स्वर २ : उन्होंने प्रमाद के विरुद्ध कितने सरल शब्दों में चेतावनी दी :

महावीर : जैसे पतझड़ आने पर पेड़ का पत्ता पीला होकर गिर जाता है, वैसे ही मनुष्य का जीवन आयु

समाप्त होने पर नष्ट हो जाता है। इसलिए क्षणभर भी प्रमाद न करो।

पुरुष-स्वर ३ : उन्होंने अपनी बात को समझाते हुए एक दूसरी उपमा दी :

महावीर : जैसे ओस की बूँद घास की नोक पर थोड़ी देर तक ही रहती है, वैसे ही मनुष्य का जीवन भी अत्यन्त अल्प है। शीघ्र ही नष्ट हो जानेवाला है। इसलिए तनिक भी आलस न करो।

पुरुष-स्वर १ : आगे वह कहते हैं :

महावीर : तू विशाल संसार-समुद्र को तैर चुका है। अब भला किनारे आकर क्यों अटक रहा है? उस पार पहुँचने के लिए जितनी हो सके, उतनी जल्दी कर।

उद्घोषक : उन्होंने एक-से-एक बढ़कर उपदेश दिये। उन्होंने कोई विषय ऐसा नहीं छोड़ा, जिस पर प्रकाश न डाला हो। उन्होंने सबसे अधिक जोर आत्मविजय पर दिया। उनके शब्द थे :

महावीर : अपनी आत्मा को जीतना चाहिए। एक आत्मा को जीत लेने पर सब-कुछ जीत लिया जाता है।

पुरुष-स्वर १ : उन्होंने जीवन के अथाह सागर में डुबकी लगाकर बहुमूल्य रत्न निकाले और उन्हें मानव-जाति को दिया।

महावीर : जो अपना भला चाहता है, उसे पाप बढ़ानेवाले क्रोध, मान, माया और लोभ इन चार दोषों को सदा के लिए छोड़ देना चाहिए।

[अल्प विराम]

क्रोध प्रीति का नाश करता है, मान विनय का, माया मित्रता का और लोभ सभी अच्छे गुणों का।

[प्रेरक वाद्य-ध्वनि]

शान्ति से क्रोध को मारो, नम्रता से अधिकार को जीतो, सरलता से माया का नाश करो और संतोष से लोभ को काबू में लाओ।

[अल्प विराम]

जिसे मोह नहीं उसे दुःख नहीं, जिसे तृष्णा नहीं उसे मोह नहीं, जिसे लोभ नहीं उसे तृष्णा नहीं, जिसके पास लोभ करने योग्य कोई पदार्थ-संग्रह नहीं, उसमें लोभ भी नहीं।

[वाद्य-ध्वनि]

काल बड़ी तेजी से दौड़ा जा रहा है। जीवन की एक-एक करके सारी रातें बीतती जा रही हैं। काम-भोग हमेशा रहनेवाले नहीं हैं। भोग-विलास के साधनों से रहित पुरुष को भोग वैसे ही छोड़ देते हैं, जैसे बिना फलवाले वृक्ष को पक्षी।

[अल्प विराम]

यह शरीर पानी के बुलबुले के समान क्षण-

भंगुर है। पहले या बाद में, एक दिन इसे छोड़ना ही है। इसलिए इसके प्रति मुझे तनिक भी आसक्ति नहीं है। स्त्री, पुत्र, मित्र और बन्धुजन सब जीते जी के ही साथी हैं। मरने पर कोई भी साथ नहीं जाता।

[वाद्य-ध्वनि]

पुरुष-स्वर : जीवन के सत्य को उन्होंने इन शब्दों में उजागर किया।

महावीर : संसार में जितने भी प्राणी हैं, वे सब अपने किये कर्मों के कारण दुःखी होते हैं। अच्छा या बुरा, जैसा भी कर्म हो, उसका फल भोगे बिना छुटकारा नहीं।

[वाद्य-ध्वनि]

गूँज : नर चाहे तो निज कर्मों से नारायण बन सकता है। सारे स्वर्गों के समस्त सुख पृथ्वी पर ही पा सकता है।

है स्वर्ग-नर्क कुछ नहीं, जहाँ मानव मरकर जाया करता।
अपने-अपने कर्मों का फल, प्रत्येक यहाँ पाया करता॥
यदि सुख की अभिलाषा है तो इंद्रिय-निग्रह को अपनाओ।
माया से दूर सदैव रहो, अल्पादि परिग्रह ठुकराओ॥

[वाद्य-ध्वनि : उसके उतार-चढ़ाव के साथ]

उद्‍घोषक : समस्त प्राणियों को जीने और दूसरों को जीने देने का मार्ग बताते हुए, सब पर अमृत की वर्षा करते हुए, महावीर पावा आये और चातुर्मास

करने के लिए वहीं ठहर गये। एक-एक करके तीन मास बीत गये। चौथा भी आधा बीत गया। कार्तिक की अमावस्या के दिन उनका अन्तिम उपदेश हुआ। रात्रि के पिछले प्रहर में उन्हें निर्वाण-पद प्राप्त हो गया।

[भावपूर्ण वाद्य-ध्वनि—उसमें उतार-चढ़ाव और अन्त में उसीकी पृष्ठभूमि में :]

गूँज : **जय त्रिशलानन्दन, हरिकृत वन्दन,**
जगदानन्दन चन्द्रवरम् ।
भवतापनिकन्दन, तनमनवन्दन,
रहितसपन्दन नयनधरम् ।।

[वन्दनाबोधक वाद्य-ध्वनि] ●

७ :: सबजन हिताय, सबजन सुखाय

[वाद्य-ध्वनि : उसकी पृष्ठभूमि में]

सस्वर पाठ : **जगपावनी, मन भावनी, गौतम वरवाणी,**
पाप नसावनी, मोक्ष प्रदायिनी, कल्याणी ।
शान्ति सिखावनी, साम्य सुझावनी सब प्राणी,
विश्व विहारिणी, विघ्न विदारिणी जनवाणी ।।

सूत्रधार : भगवान् बुद्ध का स्मरण होते ही एक ऐसे महापुरुष का मनोहर चित्र सामने आ जाता है, जिसका जीवन दया, करुणा, मैत्री, प्रेम, बन्धुत्व, अहिंसा, समता तथा समदृष्टि से परिपूर्ण था। क्या धनी और क्या निर्धन, क्या मूर्ख और क्या विद्वान्, सबके लिए उनके हृदय का द्वार खुला था। उनके लिए मनुष्य-मनुष्य के बीच किसी प्रकार का भेदभाव नहीं था।

पुरुष १ : आज भारत में बौद्धधर्मावलंबियों की संख्या सीमित है, फिर भी सारा भारत भगवान्

बुद्ध तथा उनके धर्मतत्त्वों के प्रति अपनी भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करता है। भगवान् बुद्ध ने भारत में अनेक मत-मतान्तरों के होते हुए भी पारस्परिक स्नेह और सहयोग से रहने का महान् मंत्र दिया था।

पुरुष २ : भगवान् बुद्ध के लगभग ढाई हजार वर्ष बाद सर्वधर्म-समभाव के महान् सिद्धान्त के द्वारा महात्मा गांधी ने भी इसी बात पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि कोई भी व्यक्ति किसी भी धर्म का अनुयायी रह सकता है, लेकिन वह इस बात के लिए स्वतंत्र है कि जो भी धर्म उसे रुचिकर हो, उसके सिद्धान्तों के अनुसार वह अपना जीवन ढाले।

सूत्रधार : महान् वृक्षों के बीज एक दिन में नहीं उग आते। शुभ संकल्पों और प्रयत्नों का परिणाम दीर्घ-काल के बाद दिखायी देता है। महापुरुषों के जीवन के सम्बन्ध में भी यही बात है। वे अपनी पैनी निगाह से बहुत दूर का भविष्य देख लेते हैं और एक महान् द्रष्टा के रूप में उन तत्त्वों के बीज भूमि में डाल देते हैं, भले ही उनके जमने में कभी-कभी सैकड़ों और हजारों वर्ष ही क्यों न लग जायँ।

पुरुष १ : अपने जमाने के लोगों की निगाह में अनेक महापुरुष अपने जीवनकाल में कुछ भी नहीं

कर पाये। लोगों को यह भी लगा कि उनके सिद्धान्त व्यर्थ गये, लेकिन लोग यह भूल गये कि इस संसार में जो स्थूल आँखों से दिखायी देता है, वही सब कुछ नहीं है। उसके अतिरिक्त भी कुछ है, जो अदृश्य है और जिसकी महिमा सहस्रों वर्ष बाद दुनिया को मालूम होती है।

स्त्री १ : भगवान् बुद्ध ने जब सब धर्मों की एकता और सहिष्णुता की बात कही थी तो लोगों ने खिल्ली उड़ायी थी। लेकिन ढाई हजार वर्ष बाद उसी सिद्धान्त के अनुसार हमारे देश में आवाज ऊँची हो रही है। कितने धर्म हैं भारत में, लेकिन उनके अनुयायी यह अपेक्षा नहीं रखते कि कोई दूसरा अपने धर्म को छोड़ दे और उनके धर्म का अनुयायी बन जाय। इस धार्मिक सहिष्णुता का बीज भगवान् बुद्ध ने ही तो बोया था।

पुरुष १ : यही बात जाति भेद के सम्बन्ध में है। भगवान् बुद्ध ने अपने धर्म में जातिभेद को तनिक भी स्थान नहीं दिया। उन्होंने कहा : पशु-पक्षियों में आकार-प्रकारादि से लेकर विभिन्न जातियाँ होती हैं, मगर मनुष्यों में वैसी जातियाँ नहीं होतीं। सभी मनुष्यों के सारे अवयव लग-भग एक जैसे ही होते हैं। इसलिए मनुष्यों में जातिभेद निश्चित नहीं किया जा सकता।

स्त्री २ : उन्होंने यह भी कहा, "हाँ, कर्मों पर से मनुष्य की जाति का निर्णय किया जा सकता है। कोई ब्राह्मण गायें पालकर जीवन-निर्वाह करता हो तो उसे ग्वाला कहना चाहिए, न कि ब्राह्मण। जो शिल्पकला से जीविका चलाता हो वह कारीगर है, जो वाणिज्य करता हो वह वणिक् है, दूत का काम करनेवाला दूत, चोरी से पेट भरनेवाला चोर। युद्धकला से जीविका चलानेवाला योद्धा, यज्ञयागों पर जीवन बितानेवाला याजक और राष्ट्र पर जीविका चलानेवाला राजा है। इनमें से किसीको भी ब्राह्मण नहीं कहा जा सकता।"

सूत्रधार : लेकिन उनकी ये बातें नहीं सुनी गयीं। परिणाम यह हुआ कि हमें एक हजार बरस तक दूसरों की गुलामी भुगतनी पड़ी। आज जातिवाद के दोष को हम भली प्रकार समझने लगे हैं और उसकी जड़ को निर्मूल करने के लिए प्रयत्नशील हैं। इस तरह भगवान् बुद्ध के एक महान् सिद्धान्त की सचाई आज हमारे सामने प्रकट हो रही है।

पुरुष १ : भगवान् बुद्ध ने ऐसी बातें दुनिया के सामने रखीं, जिन पर चलकर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का सिद्धान्त चरितार्थ होता है। उन्होंने सच्ची शान्ति स्थापित करने पर बार-बार जोर दिया।

उन्होंने कहा, वैर से वैर शान्त नहीं होता।

गूँज : **यह नियम सनातन, एक वैर,**
करता न दूसरे का अभाव,
निर्वैर भावना से जग में,
होता सब शान्त विरोधभाव।

स्त्री १ : उन्होंने यह भी कहा कि अक्रोध से क्रोध को जीते, भलाई से बुराई को जीते, कृपण को दान से जीते और झूठ बोलनेवाले को सत्य से जीते। क्षमा के समान इस जगत् में दूसरा तप नहीं है।

पुरुष १ : इतने वर्ष बाद आज भी हमें यही स्वर सुनायी पड़ रहे हैं। लगता है, जैसे इस युग का ही कोई महापुरुष ये बातें कह रहा है।

पुरुष २ : भगवान् बुद्ध भूखे-प्यासे और पीड़ितों की सेवा के लिए सदा तत्पर रहते थे।

स्त्री २ : रोगियों की सेवा भी उनके जीवन का मुख्य व्रत था। एक बार तिष्य नामक एक भिक्षु के शरीर में घाव हो गये थे, पीव पड़ गयी थी। भिक्षुओं का उसके पास जाना तो दूर, वे उसकी ओर घृणा से देखते थे। भगवान् बुद्ध ने उस रोगी की इस प्रकार परिचर्या की, जैसे कोई माँ अपने बेटे की करती है। बाद में उन्होंने भिक्षुओं से कहा :

पुरुष १ : भिक्षुओ, तुम्हारे माता-पिता नहीं हैं, जो तुम्हारी सेवा करेंगे। यदि तुम परस्पर एक-दूसरे की सेवा नहीं करोगे तो कौन करेगा ! जो रोगी की सेवा करता है, वह मेरी सेवा करता है।

स्त्री १ : ढाई हजार वर्ष बाद ठीक वैसी ही घटना हम अपनी आँखों देखते हैं। जब हमारे युग-पुरुष महात्मा गांधी परचुरे शास्त्री के घावों को अपने हाथों से धोते हैं और माँ जैसी आत्मीयता के साथ उनकी देखभाल करते हैं।

पुरुष २ : भगवान् बुद्ध करुणा की मूर्ति थे।

स्त्री १ : उन्होंने जहाँ अजातशत्रु जैसे पितृघाती को शरण दी, वहाँ अम्बपाली, विमला, अड्ढ काशी आदि गणिकाओं का भी उद्धार किया।

सूत्रधार : जाने कितने प्राणियों को उनकी करुणा का प्रसाद मिला। उनकी सेवा पाकर जाने कितनों ने स्वयं को धन्य माना और जाने कितनों के जीवन को उन्होंने कषायों से मुक्त करके स्वच्छ और निर्मल बनाया। उनके सिद्धान्तों की उत्कृष्टता के कारण ही सम्राट् अशोक उनका अनुयायी बना और उसने उनके धर्म को चारों ओर प्रसारित करने के लिए महान् प्रयत्न किया।

पुरुष १ : आज उनका स्मरण हमारे लिए इस कारण और भी आवश्यक हो गया है कि भारत की

आन्तरिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय नीति भगवान् बुद्ध के सिद्धान्तों का अनुसरण कर रही है।

स्त्री १ : तभी तो भारत सरकार की राज-मुद्रा और राष्ट्र-ध्वज पर सम्राट् अशोक के धर्म-चक्र को स्थान दिया गया है।

सूत्रधार : भगवान् बुद्ध के जीवन की अनेक घटनाएँ स्मरणीय हैं। लुम्बिनी वन में शालवृक्ष के नीचे उनका जन्म, भरी जवानी में राजपाट और परिवार का त्याग तथा कई वर्ष तक कठोर साधना, ये सब घटनाएँ अपना महत्त्व रखती हैं, लेकिन सबसे अधिक महत्त्व है वैशाख की पूर्णिमा का, जिस दिन उन्हें बोध प्राप्त हुआ था।

स्त्री १ : वह दिन निस्सन्देह भारत के लिए ही नहीं, संसार के लिए एक महोत्सव का दिन था और आज भी है।

स्त्री २ : भगवान् बुद्ध की सम्बोधि-प्राप्ति का अर्थ था उन महान् तत्त्वों की चरमसिद्धि, जिनके लिए वह न केवल राजपाट त्यागकर अकिंचन बने थे, अपितु कठोर साधना के द्वारा उन्होंने अपने को विश्व के सुख-दुःख के साथ मिला दिया था।

स्त्री १ : वे जानते थे कि इस संसार में सुखी कम हैं, दुःखी अधिक हैं, समृद्धों की संख्या कम है,

अभावग्रस्त अधिक हैं। इसलिए उन्होंने जिस स्वर को ऊँचा किया, वह था बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय।

स्त्री २ : गांधीजी के सर्वोदय की बुनियाद भी उसीकी नींव पर रखी गयी। विगत अनुभवों के आधार पर युग आगे बढ़ता गया है। बुद्ध ने 'बहुजन' को लिया तो गांधीजी की परिधि में सबका उदय आ गया, 'सर्वजन' आ गया।

पुरुष १ : बुद्ध ने कहा : मनुष्य स्वयं ही अपना स्वामी है। अपने को जिसने भलीभाँति जीत लिया, वही दुर्लभ स्वामित्व प्राप्त कर सकता है।

गूँज : **संग्राम-भूमि में जय पाता—**
कोई कर लाखों को सभीत।
पर सत्य समर, विजयी है वह
जो स्वयं आपको चुका जीत।

स्त्री १ : उन्होंने यह भी कहा : जो प्राणियों की हिंसा करता है, जो झूठ बोलता है, जो किसीकी न दी हुई चीज को उठा लेता है, यानी चोरी करता है, जो शराब पीता है, वह दुनिया में अपनी जड़ आप खोदता है।

पुरुष १ : ऐसा प्रतीत होता है, मानो महात्मा गांधी ही अहिंसा, सत्य, अस्तेय तथा निर्व्यसन के महाव्रतों का उपदेश दे रहे हों।

सूत्रधार : जीवन के कुछ शाश्वत सत्य होते हैं। उनकी

उपयोगिता सार्वदेशिक और सार्वकालिक होती है। भगवान् बुद्ध के अनेक धर्मतत्त्व ऐसे ही थे। जिस युग में वह अवतीर्ण हुए, वह युग बड़ी उथल-पुथल का था, पर उन्हें जो सच लगा, वह कहा और वैसा ही किया। कुछ लोगों का ध्यान उनकी ओर गया, लेकिन उन लोगों की संख्या बहुत थोड़ी थी। बीच में फिर वह समय आया, जब कि उन सिद्धान्तों की अवहेलना हुई और उसका दुष्परिणाम लम्बे अरसे तक भोगना पड़ा। आज पुनः वह मंगल-वेला आयी है, जब कि देश-विदेश के लोग उस ओर आशाभरी निगाह से देखते हैं।

स्त्री १ : और वे अपने निजी, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय जीवन में उन सिद्धान्तों की कल्याणकारिता को स्वीकार करते हैं।

सूत्रधार : भारत-भूमि निस्सन्देह धन्य है कि उसने बुद्ध, महावीर और गांधी जैसे महापुरुषों को जन्म दिया। ये सब दूसरों के लिए जिये और दूसरों की सेवा में ही उन्होंने अपने जीवन के प्रत्येक श्वास का सद्व्यय किया।

पुरुष १ : भगवान् बुद्ध ने अपने भिक्षुओं को आदेश देते हुए कहा था :

बुद्ध : हे भिक्षुओ, लोक के हित के लिए, लोक के सुख के लिए, लोक पर दया करने के लिए, देवताओं

और मनुष्यों के प्रयोजन के लिए, हित के लिए, सुख के लिए, विचरण करो।

सूत्रधार : इस प्रकार बुद्ध भगवान् ने प्रेम, दया, करुणा, लोक-कल्याण आदि की ऐसी सरिता प्रवाहित की कि संसार का प्रत्येक प्राणी उसमें डुबकी लगाकर अपने को पावन बना ले। जीवन वही सार्थक है, जो दूसरों के काम आता है और वही व्यक्ति धन्य है, जिसके जीवन का हर क्षण लोक-हित में व्यतीत होता है।

पुरुष १ : भगवान् बुद्ध के चरणों में आज हमारी श्रद्धा इसीलिए नत हो जाती है कि उन्होंने संसार को सुख और शान्ति का मार्ग दिखाया और दीन-दुखियों तथा पददलितों को आशा का संदेश दिया।

स्त्री १ : एक बार एक मनुष्य कहीं पड़ा था। बड़ा व्याकुल था। बुद्ध का शिष्य उधर से निकला। शिष्य ने बुद्ध का उपदेश सुनाया, लेकिन उसने नहीं सुना। शिष्य ने आकर बुद्ध से कहा। बुद्ध उस शिष्य को लेकर अगले दिन वहाँ गये। उसे भूखा देखकर भोजन मँगवाया और सबसे पहले उसे भोजन करवाया। शिष्य ने पूछा, भन्ते, आपने उपदेश नहीं दिया। बुद्ध ने कहा, भोजन ही आज इसका उपदेश था।

पुरुष २ : **आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्—**

यह ऋषि-वचन है। जिस आचरण से तुम समझते हो कि तुम्हें दुःख पहुँचेगा, उसका प्रयोग दूसरों के प्रति मत करो।

स्त्री १ : भगवान् बुद्ध ने भी यही कहा है कि वही बात बोलो, जिससे अपने को दुःख न हो और दूसरे किसीको दुःख न पहुँचे।

पुरुष १ : भगवान् बुद्ध ने कहा, बड़ा मनुष्य कौन है ? हंस, क्रौंच, मोर, हाथी, मृग, ये सभी पशु-पक्षी सिंह से भय खाते हैं। कौन शरीर में बड़ा है और कौन शरीर में छोटा, यह तुलना करना व्यर्थ है। इसी प्रकार मनुष्यों में बौने शरीर का होते हुए भी यदि कोई प्रज्ञावान् है, तो वही वास्तव में बड़ा है। भारी-भरकम शरीर के होते हुए भी हम मूर्ख मनुष्य को बड़ा नहीं कह सकते।

स्त्री १ : उन्होंने यह भी कहा कि श्रद्धावान्, शीलवान्, यशस्वी पुरुष जिस देश में जाता है, वहीं वह पूजित होता है।

सूत्रधार : जीवन को उन्नत बनाने के लिए कोई भी ऐसा विषय नहीं है, जिस पर भगवान् बुद्ध के अमृत-वचन उपलब्ध न हों।

स्त्री २ : छोटों के लिए कितना प्रेम था उनमें !

पुरुष १ : भगवान् राम ने शबरी के बेर खाये थे। भगवान् बुद्ध ने भी गणिका अम्बपाली के यहाँ

भोजन किया। उन्होंने अपने आचरण से वता दिया कि महापुरुषों के लिए सारे मानव एक समान होते हैं। न कोई नीचा, न कोई ऊँचा, न कोई बड़ा, न कोई छोटा।

पुरुष २ : भगवान् बुद्ध के अन्तिम शब्द कितने लोक-हित-कारी थे, "संसार की सब वस्तुएँ विनष्ट हो जानेवाली हैं। बिना आलस किये जीवन के लक्ष्य को पूरा करो।" ऐसे महापुरुष के सिद्धान्तों को स्मरण करना, उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करना, लोक-जीवन में ऐसा शीतल स्रोत प्रवाहित करना है, जो सबके लिए मंगलकारी है और जो युगधर्म के अनुकूल है।

गूँज :

हे महाबोधि, हे महाप्राण,
तुमको है अभिनन्दन महान्।
हे ज्ञान पुञ्ज की अमर ज्योति
तुमने जग का उद्धार किया,
ले सत्य, अहिंसा व्रत निर्मल
फिर धरती पर अवतार लिया।
व्याकुल मानवता शान्त हुई,
पा बौद्धधर्म दिव्यावदान।
हे महाबोधि, हे महाप्राण,
तुमको है अभिनन्दन महान्।

[वाद्य-ध्वनि]

८ :: माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः

[पृष्ठभूमि संगीत । उसीके साथ]

कई स्वर : सुरम्य शान्ति के लिए जमीन दो, जमीन दो ।
महान् क्रान्ति के लिए जमीन दो, जमीन दो ।
जमीन दो कि देश का अभाव दूर हो सके ।
जमीन दो कि द्वेष का प्रभाव दूर हो सके ।
जमीन दो कि भूमिहीन लोग काम पा सकें ।
उठा कुदाल बाजुओं का जोर आजमा सकें ।।
महा विकास के लिए जमीन दो, जमीन दो ।
नये प्रकाश के लिए जमीन दो, जमीन दो ।।

पुरुष-स्वर : भूमिदान दो भूमिदान दो ।
तोड़ रहे जो साँस सर्वहारा,
उनको तुम प्राण त्राण दो ।

स्त्री : पुकार भूमिदान की, यह देश की, किसान की ।
सुजान की, अजान की, यह लहर है तूफान की ।।

पुरुष : **प्रभु ने देकर जन्म सभी को एक समान सँवारा है ।**
पृथ्वी, पानी, पवन सभी पर सम अधिकार हमारा है ।
भेदभाव मिट गया बह रही विमल प्रेम की धारा है ।
भूमिदान दो, भूमिदान दो, यही हमारा नारा है ।।

सूत्रधार : भूमिदान दो, भूमिदान दो, यही हमारा नारा है। आज चारों ओर से भूमिदान का स्वर सुनायी दे रहा है, भूमिदान की पावन गंगा देश में जगह-जगह प्रवाहित हो रही है। महान् साधना का परिणाम है यह। सन् १९५१ की १८ अप्रैल को तेलंगाना के एक छोटे-से देहात से यह गंगा सहज ही उमड़ पड़ी थी। आचार्य विनोबा भावे वर्धा से पैदल यात्रा करते हुए सर्वोदय-सम्मेलन में भाग लेने शिवरामपल्ली गये थे। सम्मेलन के समाप्त होने पर कुछ लोगों के आग्रह पर तेलंगाना के अशान्त क्षेत्र को देखने निकले। एक दिन उनका पड़ाव नलगुंडा जिले के पोचमपल्ली गाँव में था। वहाँ तीन हजार की आबादी थी, जिसमें से दो हजार के पास जमीन नहीं थी। वहाँ के सब हरिजन जमीनवालों के यहाँ मजदूरी करते थे। उनमें से कुछ लोग विनोबा के पास आये और उनसे प्रार्थना की :

पुरुष १ : महाराज, हम दूसरों की चाकरी करते-करते मरे जाते हैं। हमारे पास कोई भी धन्धा नहीं है।

पुरुष २ : हमारे पास निर्वाह का कैसा भी साधन नहीं है। हमें कुछ जमीन दिलवा दीजिये।

पुरुष ३ : जमीन मिल जाय तो हम स्वयं उसे जोतेंगे और बोयेंगे। उससे हमारे सारे दुःख दूर हो जायेंगे। हम शान्ति से रहेंगे।

सूत्रधार : विनोबा को उनकी बात ठीक लगी। उन्होंने पूछा, कितनी जमीन चाहिए ? एक ने बताया अस्सी एकड़। शाम को प्रार्थना-सभा हुई, उसमें विनोबा ने उन भूमिहीन हरिजनों की माँग लोगों के सामने रखी। सब शान्त थे। अचानक रामचन्द्र रेड्डी नामक एक आदमी उठ खड़ा हुआ। बोला :

पुरुष १ : लीजिये, अपने इन भाइयों के लिए मैं अपनी सौ एकड़ भूमि देता हूँ।

सूत्रधार : बिना किसी जोर-दबाव के स्वेच्छा से दिये इस दान का बड़ा महत्त्व था। विनोबा गद्गद हो गये। सारी सभा गद्गद हो गयी। यही था भूदान-गंगा का उद्गम। यहीं से भूदान-यज्ञ आरम्भ हुआ। यहीं से विनोबा अपने इने-गिने साथियों को लेकर अहिंसक क्रान्ति के पथ पर चल पड़े। उनके पास बाहरी साधन न थे, पर उनके हृदय में उस परमपिता के प्रति गहरी निष्ठा थी, जिसने इस महान् यज्ञ का सूत्रपात कराया था। उनकी वाणी में सबके लिए अनु-

राग था। हृदय में सबके कल्याण की भावना थी। बड़े प्रेमभरे शब्दों में वह कहते थे :

विनोबा : भगवान् ने पानी, हवा और प्रकाश सबको समान रूप से दिये हैं। किसी एक का उन पर अधिकार नहीं है। तब धरती पर ही क्यों हो? 'सबै भूमि गोपाल की।'

सूत्रधार : उनका माँगने का ढंग भी निराला था। वह कहते थे :

विनोबा : तुम्हारे घर में पाँच बच्चे हैं तो छठा मुझे मान लो और मेरा हक मुझे दे दो। जमीन ईश्वर ने सबके लिए बनायी है। वह सबको समान रूप से मिलनी चाहिए। धरती माँ है। उससे किसीको भी वंचित न रहने दो। अगर माँ को बेटों से अलग करोगे तो भेदभाव बढ़ेगा।

गूँज : **कौन ले गया बाँध साथ में मरकर स्वर्ग-नरक तक धरती।**
न्याय नहीं भोगो तुम धरती, जब जगती है भूखों मरती।
सुन न सको जो करुण पुकारें धरती की ही सुनो गुहारें।
जियो और जीने दो सबको धरती यों पुकार है करती।
धरती के हैं पुत्र सभी तो, धरती से इसका प्रमाण दो।
भूमिदान दो, भूमिदान दो।

सूत्रधार : अपनी क्षीण काया को लेकर, अदम्य उत्साह के साथ, विनोबा ५१ दिन तेलंगाना में घूमे। लगभग १२,००० एकड़ भूमि उन्हें मिली।

यज्ञ का प्रारम्भ था, लोगों ने अनेक आशंकाएँ प्रकट कीं :

पुरुष १ : पैदल क्यों घूमते हो ?

विनोबा : शंकराचार्य, महावीर, बुद्ध, कबीर, चैतन्य, नामदेव जैसे लोग हिन्दुस्तान में पैदल घूमे। वे चाहते तो घोड़े पर भी घूम सकते थे, परन्तु उन्होंने त्वरित साधन का सहारा नहीं लिया, क्योंकि वे विचार का शोधन करना चाहते थे और विचार-शोधन के लिए सबसे उत्तम साधन पैदल घूमना ही है ।

स्त्री २ : आपने 'दान' शब्द का प्रयोग क्यों किया है ?

विनोबा : 'दान' शब्द का अर्थ 'सम-विभाजन' है । मैं उस शब्द के प्राचीन गौरव को फिर से स्थापित करना चाहता हूँ ।

पुरुष २ : आपने इसे 'यज्ञ' क्यों कहा ?

विनोबा : इसलिए कि उसमें अमीर-गरीब, छोटे-बड़े सब भाग ले सकें ।

सूत्रधार : फिर भी लोगों का पूरा समाधान नहीं हुआ। उन्होंने कहा :

पुरुष १ : तेलंगाना में अशान्ति थी । इसलिए इतनी जमीन उन्हें मिल गयी। अब आगे उन्हें नहीं मिलने की।

पुरुष २ : प्रेम से कहीं जमीन की समस्या हल होती है ? यह डेढ़ पसली का बूढ़ा कहाँ-कहाँ घूमेगा ?

सूत्रधार : और भी बहुत-सी बातें कही गयीं, पर विनोबा पर इन सबका कोई असर नहीं हुआ। उनके लिए भूदान-यज्ञ भूमि-समस्या का हल नहीं था, वह तो उसके द्वारा नये मूल्य स्थापित करना चाहते थे। उन्होंने कहा :

विनोबा : मैं दान नहीं लेता हूँ, सेवा की दीक्षा देता हूँ। जो दें, वे मेरी बात को समझकर दें।

स्त्री १ : उन्होंने यह भी कहा :

विनोबा : जहाँ मैं दान लेता हूँ, वहाँ हृदय-मंथन की, हृदय-परिवर्तन की, मातृ-वात्सल्य की, भ्रातृ-भावना की, मैत्री की और गरीबों के लिए प्रेम की आशा करता हूँ। यह भूदान अहिंसा का एक प्रयोग है, हृदय-परिवर्तन का प्रयोग है।

सूत्रधार : भूदान-गंगा का प्रवाह उस समय तीव्र नहीं था। पर विनोबा के लिए वह उनके जीवन का ध्येय बन गया। वह कुछ दिन वहाँ रहे। तभी उन्हें योजना-आयोग से बात करने के लिए जवाहरलाल नेहरू का निमंत्रण मिला। वह दिल्ली की ओर पैदल चल पड़े। इस यात्रा में उन्होंने संकल्प किया :

विनोबा : जब तक परमात्मा की कृपा से मुझमें शक्ति शेष रहेगी, मैं देश की यात्रा करूँगा और भूमि-हीनों के लिए जमीन माँगूँगा। उनके इस संकल्प पर, पुकार पर, बहुत कंठ बोल उठे :

समवेत-स्वर : **आज इक फकीर की जो भूमि की पुकार है ।**
पुकार है यह दीन की, यह देश की पुकार है ।

पुकार दीन-हीन की न अब भुलायेंगे ।
भूमि-दान-यज्ञ हम सफल बनायेंगे ।

सूत्रधार : विनोबा ने सोचा कि भूमि-समस्या को सुलझाने के तीन उपाय हो सकते हैं—कत्ल, कानून और प्रेम । हिंसक ढंग से जबरदस्ती जमीन छीनी जा सकती है । पर उसका दुष्परिणाम वह तेलंगाना में देख चुके थे । कानून का रास्ता वह जानते थे कि बड़ा लम्बा होता है । इसलिए प्रेम अर्थात् हृदय-परिवर्तन का मार्ग ही उन्हें सर्वोत्तम लगा । वही उन्होंने अपनाया। २ अक्तूबर १९५१ को गांधी-जयंती के अवसर पर उन्होंने घोषणा की कि मैं पाँच करोड़ एकड़ भूमि इकट्ठी करूँगा । मैं संपूर्ण खेतिहर भूमि का छठा भाग चाहता हूँ । मध्यप्रदेश, विन्ध्य-प्रदेश, मध्य भारत, राजस्थान और उत्तर प्रदेश के कुछ भागों में होते हुए विनोबा दिल्ली पहुँचे । रास्ते में उन्हें लगभग बीस हजार एकड़ भूमि मिली । ग्यारह दिन राजधानी में रहकर वह उत्तर प्रदेश की यात्रा पर निकल पड़े । ११ सितम्बर १९५२ को अपनी वर्षगाँठ पर उन्होंने निश्चय किया :

विनोबा : जब तक देश की भूमि-समस्या हल नहीं हो जायगी, मैं अपने आश्रम नहीं लौटूँगा ।

सूत्रधार : भूदान की मन्दाकिनी जब प्रारम्भ हुई, तब बहुत छोटी थी । अब विकसित होने लगी ।

स्त्री १ : भूमि के साथ-साथ उन्हें बैल मिले, हल मिले और बोने के लिए अनाज, सिंचाई के लिए कुएँ ।

स्त्री २ : उत्तर प्रदेश के कार्यकर्ताओं ने निश्चय किया कि दो वर्ष के भीतर पचीस लाख एकड़ भूमि इकट्ठी कर देंगे ।

पुरुष १ : जिनके पास जमीन या साधन नहीं थे, उन्होंने अपने श्रम का दान किया ।

सूत्रधार : इस प्रकार चारों ओर एक नयी हवा फैलने लगी । प्रेम की पुकार पर छोटे-बड़े सभी खुशी-खुशी विनोबा को भूमि अर्पित करने लगे ।

पुरुष २ : एक रोज तो रात के ग्यारह बजे एक अंधे भाई आये । उनके पास बारह बीघा जमीन थी । पूरी-की-पूरी देकर चले गये ।

सूत्रधार : अगले दिन विनोबा ने अपने प्रवचन में उस घटना का उल्लेख किया, तो उनका कंठ अवरुद्ध हो गया । आँखों से आँसू छलक आये । बड़ी कठिनाई से मुँह खोला तो बोले :

विनोबा : वह व्यक्ति और कोई नहीं, रामचरण के रूप में स्वयं कृष्ण भगवान् ही थे ।

स्त्री १ : उनके यज्ञ में स्त्रियों ने भी भाग लिया। एक वृद्धा माँ रातभर ठंड में बैठी रही और अगले दिन अपनी पूरी भूमि उन्हें अर्पित कर गयी।

सूत्रधार : इस वृद्धा के दान पर विनोबा ने गद्गद होकर कहा : इस यज्ञ में कितनी ही शबरियों ने अपने बेर भेंट किये। उन्हें छोटे-छोटे दान मिले। बड़े-बड़े दान मिले। हमीरपुर जिले में उन्हें एक पूरा-का-पूरा गाँव ही मिल गया। मँगरौठ की बात है। विनोबा पास से गुजर रहे थे। कुछ लोग मिलने आये। विनोबा ने उनसे इतना ही कहा : सबै भूमि गोपाल की।

स्त्री १ : इस मंत्र ने जादू का काम किया।

पुरुष १ : सब लोगों ने मिलकर समूचा गाँव उन्हें सौंप दिया।

स्त्री २ : बाद में तो उन्हें एक-एक व्यक्ति से लाख-लाख एकड़ तक भूमि मिली।

सूत्रधार : भूदान की कल्पना अब काफी विकसित हो चुकी थी और उसने सारे देश का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया था। लोग विनोबा को बाबा कहने लगे। कुछ लोगों ने नयी आशंकाएँ प्रकट कीं।

पुरुष १ : भूदान से जमीन के छोटे-छोटे टुकड़े हो जायेंगे। उन पर खेती करना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं होगा।

पुरुष २ : उन छोटे-छोटे टुकड़ों पर खेती के साधनों, जैसे हल-बैल आदि का पूरा उपयोग नहीं होगा।

पुरुष ३ : खेती पर ध्यान केन्द्रित करने से देश के उद्योग-धन्धों को हानि पहुँचेगी।

सूत्रधार : विनोबा बाबा ने इन सबको बड़ी गम्भीरता से उत्तर दिया। उन्होंने कहा :

विनोबा : जमीन के छोटे-छोटे टुकड़े हो जायेंगे तो क्या ! जमीन से लोगों का आत्मीयता का नाता जुड़ जायगा और उससे पैदावार बढ़ेगी।

विनोबा : सहकारिता के आधार पर खेती करेंगे तो साधनों का पूरा उपयोग अपने-आप हो जायगा।

विनोबा : उद्योग-धन्धों को हानि क्यों पहुँचेगी ? आखिर खेती-बारी में पूरा समय तो लगता नहीं है। खेती से बचे समय का उपयोग पूरक उद्योग-धन्धों में किया जा सकता है।

सूत्रधार : इस प्रकार शंकाओं का समाधान करते हुए अडिग विश्वास के साथ बाबा की पद-यात्रा चलती रही, चलती रही। हजारों कार्यकर्ता उनके यज्ञ में आ जुटे। सारे देश का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हुआ। विदेशियों का ध्यान भी उनकी ओर गया। भूदान-यज्ञ का स्वर प्रखर हो उठा। उत्तर प्रदेश के बाद बाबा ने भगवान् बुद्ध की भूमि बिहार में प्रवेश किया।

लोगों की श्रद्धा उमड़ पड़ी। वहाँ बाबा ने संकल्प किया कि जब तक उन्हें सारे बिहार की भूमि का छठा भाग नहीं मिल जायगा, तब तक वह बिहार नहीं छोड़ेंगे। पटना में एक नयी बात हुई। भूदान में सम्पत्तिदान भी आ जुड़ा। उस विचार को स्पष्ट करते हुए बाबा ने कहा :

विनोबा : भूदान के कार्य के विकास के साथ-साथ यह भी स्पष्ट होता गया कि आन्दोलन-सम्बन्धी उद्देश्य तब तक पूरा नहीं हो सकता, जब तक कि हम सम्पत्ति और जायदाद का भी एक अंश न माँगें। यह माँग आय के छठे भाग के बराबर होगी।

सूत्रधार : इस प्रकार भूदान में सम्पत्तिदान की धारा भी आ मिली। भूदान-यज्ञ का क्षेत्र अब और व्यापक हो गया। गया में जयप्रकाश नारायण के आह्वान पर अनेक लोगों ने अपना जीवन ही इस काम के लिए अर्पित कर दिया। स्वयं विनोबा ने 'भूदान-यज्ञमूलक, ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति के लिए अपना जीवन समर्पित' कर दिया।

गूँज : **जिसके बल पर राष्ट्र-भवन की मुसकाती दीवारें।**
जिसके मन पर गौरव करतीं शत-शत करुण पुकारें।
श्रमिकों के खँडहर पर आकर जिसने दीप जलाया।
घर बैठे ही वही तपस्वी धन्य भाग जो पाया।

संत तभी दर्शन देते हैं, जब पुण्य उभरते हैं।
संत, आपकी चरण-धूल से अगजग तरते हैं।

स्त्री १ : १९५५ के प्रारम्भ में बंगाल होते हुए विनोबा उड़ीसा पहुँचे। उड़ीसा में उन्हें लाखों एकड़ भूमि मिली और अकेले कोरापुट जिले में ६०० पूरे गाँव मिले। पुरी में उन्होंने कहा :

विनोबा : मैं विश्व-शान्ति के लिए भूमिदान चाहता हूँ। सब लोग दो वर्ष तक इसमें सहयोग दें, जिससे १९५७ तक एक अहिंसात्मक शासन-मुक्त समाज की स्थापना हो सके।

सूत्रधार : बिहार में बाबा ने 'भूमिदान दो, भूमिदान दो' कहते हुए प्रवेश किया था। वहाँ से चले तो लोग कहते थे, 'भूमि लो, भूमि लो।' यही उड़ीसा में हुआ। विनोबा घर-घर अलख जगाते हुए, अहिंसक क्रान्ति का शंखनाद करते हुए, दक्षिण भारत में घूमे। भारत का कोई भी भाग ऐसा नहीं बचा, जहाँ जाकर बाबा ने अहिंसक क्रान्ति का सन्देश न दिया हो। उनकी यात्रा अखण्ड चलती रही। न जाड़े में रुके, न गर्मी में, न वर्षा में, न बीमारी में। लोगों ने कहा—थोड़ा विश्राम ले लो, बाबा। उनका जवाब था—सूर्य कभी आराम करता है? चन्द्रमा कभी रुकता है? नदी का प्रवाह कभी

थमता है ? उनकी इस साधना से विह्वल होकर देशरत्न डॉ० राजेन्द्रप्रसाद ने कहा :

राजेन्द्र प्रसाद : यह हमारे सौभाग्य की बात है कि आज विनोबाजी जैसा एक सन्त प्राचीन काल के संतों की तरह भारत के किसी एक कोने में न रहकर सारे भारतवर्ष का वर्षों से चक्कर लगा रहा है और बड़ी-बड़ी सभाओं के द्वारा ही नहीं, बल्कि एक-एक छोटे-बड़े सब प्रकार के लोगों से मिल-कर अपना सन्देश सुना रहा है और उनके हृदय के अन्दर वे सब भावनाएँ जागृत कर रहा है, जिनके बल पर हम आगे बढ़ सकते हैं। हम सब आज ईश्वर से यही प्रार्थना करें कि हमको उनके दर्शन मिलते रहें, उनकी शिक्षा सुनने का अवसर मिलता रहे और हम उससे लाभा-न्वित होते रहें।

सूत्रधार : सारे देश में लाखों व्यक्ति भूदान के काम में जुट गये। उन्हें सब पक्षों के नेताओं और कार्य-कर्ताओं का सहयोग मिला। एक अवसर पर विनोबा ने कहा :

विनोबा : सब नेताओं ने विचार-विमर्श करके ग्रामदान को सम्मति दी और देश को आदेश किया कि सब लोग इस काम को उठा लें। यह घटना भूदान-आन्दोलन के इतिहास में तो अपूर्व ही है, परन्तु हम समझते हैं कि स्वराज्य-प्राप्ति

के बाद इस प्रकार की कोई घटना नहीं हुई है कि जहाँ सब पक्षों के लोग इकट्ठे हुए हों और एक निर्णय पर आये हों। इस दृष्टि से इस घटना का महत्त्व है और इसके बाद आशा करनी चाहिए कि सारे देश की ताकत इस काम में लगेगी। जब देश के सब नेतागण आदेश देते हैं, तो इसके पीछे हम सब लोगों को ताकत लगानी चाहिए। इससे बुनियाद बनेगी।

विनोबा को लाखों एकड़ भूमि मिली, लेकिन समाज की नवरचना के आकांक्षी विनोबा को इससे कहाँ सन्तोष होनेवाला था! वह भूदान से बढ़कर ग्रामदान पर आ गये और उससे भी आगे उन्हींके शब्दों में :

भूदान में से ग्रामदान निकला, सम्पत्तिदान निकला, श्रमदान निकला, जीवन-दान निकला, बुद्धिदान निकला। ऐसी तरह-तरह की शाखाएँ उसमें से फूट निकलीं। तो नया-नया विचार निकल ही रहा है और फिर आखिरी विचार है शान्ति-सेना और सर्वोदय। यह विचार अभी-अभी उत्पन्न हुआ है, तो किसीने कहा, बाबा, इसके आगे जरा रुकियेगा तो अच्छा रहेगा। बहुत ज्यादा कार्यक्रम बढ़ेगा तो इसका विकास रुकेगा। मैंने कहा, मेरे हाथ में

रोकने का नहीं। मैंने जो शुरू किया, आखिरी समझकर किया । शान्ति-सेना और सर्वोदय ये आखिरी हैं, ऐसा नहीं समझता हूँ। लेकिन आखिरी हैं, कहते-कहते ब्रह्मविद्या का विचार निकला। उसके बाद मैंने कहा, प्रेम-क्षेत्र और कर्म-क्षेत्र को एक बनाओ। हमारा प्रेम-क्षेत्र हमारे घर में, कर्म-क्षेत्र साथियों में । हमारे दो टुकड़े हो जाते हैं। हमारे जो प्रेम के साथी हैं वे काम के बनें और काम के साथी हैं वे प्रेम के बनें, तब हम आगे बढ़ेंगे ।

सूत्रधार : भारत गाँवों का देश है। देहात का किसान और मजदूर, ये दोनों देश की बुनियाद हैं । विनोबा मानते हैं कि किसानों और मजदूरों को ऊपर उठाना हो तो ग्रामदान से बढ़कर और कोई उपाय नहीं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 'सर्वोदय' अर्थात् सबके उदय की कल्पना को विनोबाजी ने विकसित किया और पोषण दे रहे हैं ।

स्त्री १ : भूदान के द्वारा वह भूमिपुत्रों का भू-माता से आत्मीयता का नाता जोड़ना चाहते हैं, जिससे देश का प्रत्येक नागरिक कह सके, भूमि मेरी माता है, मैं उसका पुत्र हूँ ।

पुरुष १ : ग्रामदान के द्वारा वह ऐसे समाज की रचना करना चाहते हैं, जिसमें कोई किसीका शोषण

न करे, न कोई अपना शोषण होने दे, सब मिलकर प्रेम से रहें, एक-दूसरे की सहायता करें और उन्हें विकास का पूरा अवसर मिले।

सूत्रधार : कुछ लोगों को भय हुआ कि ग्रामदान से व्यक्तिगत स्वामित्व नष्ट हो जायगा। विनोबा का स्पष्ट उत्तर था, किसी-न-किसी निमित्त से भूमि या उसका स्वामित्व जनता के हाथों से निकलकर दूसरों के पास जा रहा है। ऐसी हालत में जमीन सामान्य जन के पास रहे, इसलिए आवश्यक है कि स्वामित्व गाँव के हाथ में पकड़ रखा जाय और काश्त व्यक्ति के हाथ में।

स्त्री २ : अब तक विनोबा को हजारों ग्रामों का दान मिल चुका है, अनेक प्रखण्ड मिले हैं। बिहार को विनोबा ने अपना कार्य-क्षेत्र बना रखा था और वहाँ के कार्यकर्ता उन्हें पूरे-का-पूरा बिहार दिलवाने के लिए प्रयत्नशील हैं। लोगों ने पूछा : प्रखण्डदान होने के बाद क्या-क्या करना पड़ेगा? लोक-हित की भावना से ओतप्रोत विनोबा का उत्तर है : गाँव-गाँव के लोग अपनी योजना बनायेंगे, उन्हें भगवान् का आशीर्वाद मिलेगा और भारत में लोक-शक्ति प्रकट होगी।

सूत्रधार : ईश्वरीय शक्ति पर विश्वास रखनेवाले विनोबा विज्ञान की प्रगति के भी समान रूप से समर्थक

हैं । वे जानते हैं और मानते हैं कि यह युग विज्ञान का है । पर उनका विश्वास है कि विज्ञान का पूरा लाभ तब मिल सकता है, जब कि उसके साथ आध्यात्मिकता यानी रूहानियत का सामंजस्य हो । वह कहते हैं :

विनोबा : जाहिर है कि साइन्स अब जोड़ना चाहता है । तोड़नेवाले साइन्स ने जोड़नेवाले बना दिये हैं। मैं बहुत दफा मिसाल देता हूँ, जिस पैसिफिक समुद्र में अमरीका और जापान को दो सिरे पर रखा था, दुनिया के दो कोनों पर––एक फार ईस्ट (सुदूर पूर्व)और दूसरा फार वेस्ट (सुदूर पश्चिम) बन गया था, उस समुद्र को दोनों ने जोड़ा है और दोनों पड़ोसी देश बने हैं । जो समुद्र तोड़नेवाला था, वह अब जोड़नेवाला बन गया । ऐसे जड़ पदार्थ, जो तोड़ते थे, वे भी जोड़ने लगे । पृथ्वी से इतनी दूर रहा हुआ चन्द्रमा भी आज पृथ्वी के साथ जुड़ा जा रहा है । कुत्ते जो ऊँची उड़ान भरने की कल्पना कर ही नहीं सकते थे, वे ऊँचे आसमान पर उड़ रहे हैं।

सूत्रधार : और अब तो मनुष्य चन्द्रलोक की यात्रा कर आया है । विनोबा ने आगे कहा :

विनोबा : उस जमाने में मनुष्य-मनुष्य के बीच संशय की दीवार खड़ी करनेवाली सियासत काम की

नहीं रही, यह स्पष्ट है। साइन्स तो जब से मनुष्य पैदा हुआ है, तब से ही पैदा हुआ है और धीरे-धीरे बढ़ता रहा है। अग्नि की खोज जब हिन्दुस्तान में हुई, तब ऋषियों को कितना आनन्द हुआ था और उसमें कितनी दिव्यता का उन्होंने दर्शन किया था ! वह सारा वर्णन हमें वेद-सूक्तों में मिलता है। एक परमेश्वर अपने हाथ में आया। देवता हमको पैदा करते हैं, हमारा पालन-पोषण करते हैं, लेकिन यह एक देवता हम पैदा करते हैं। इस तरह से बड़ा ही उत्साह हमको मालूम हुआ था और बहुत भक्तिभाव से अग्नि की तरफ देखते थे और वह सब हमको वेद में पढ़ने को मिलता है। अग्नि की खोज जिस जमाने में हुई, उस जमाने में, जीवन में, बहुत फर्क पड़ा और उसके बाद और भी कई शोध हो चुके और अब तो आणविक शक्ति की पहचान मनुष्य को हो गयी है। साइन्स दिन-ब-दिन प्रगति कर रहा है। १९४२ से १९४५ तक तीन साल लगातार जेल में रहा। उससे पहले व्यक्तिगत सत्याग्रह के सिलसिले में साल-सवा साल। मैं चिन्तन करता रहा और मेरे ध्यान में बार-बार यह आया कि हमको अहिंसा की सिखावन दी जा रही है। कई कारणों से हमारे लिए वह लाभ-

दायक है। यह सब हमारी सभ्यताओं में पली है। लेकिन इसके आगे अहिंसा अत्यन्त अनिवार्य होनेवाली है, क्योंकि साइन्स का जमाना आ रहा है।

सूत्रधार : आगे चेतावनी देते हुए उन्होंने कहा :

विनोबा : उस हालत में अहिंसा के साथ अगर साइन्स का विवाह होगा तो उसमें से मंगलमय जीवन पैदा हो सकता है। दुनिया में स्वर्ग आ सकता है और अगर साइन्स का हिंसा के साथ सम्बन्ध बना तो मानव और मानवता दोनों एक साथ मिटनेवाले हैं।

पुरुष १ : आज सारे देश में विनोबा की वाणी मुखरित हो रही है। विदेशी भी आशाभरी दृष्टि से उनकी ओर देख रहे हैं। विनोबा इसे 'प्रजा-सूय' कहते हैं और सबकी सहायता चाहते हैं।

स्त्री १ : यह दरिद्रनारायण की सेवा का यज्ञ है।

स्त्री २ : इसीसे ग्राम-राज्य स्थापित होगा।

स्त्री १ : इसीसे सर्वोदय की कल्पना साकार होगी। राम-राज्य स्थापित होगा।

गूँज : **गांधी की पद-रज से प्रकटी, जो विचार की धारा,**
सन्त विनोबा उठा रहे जन-क्रान्ति उसीके द्वारा।
निर्भय भूमि-यज्ञ में आओ, अपनी आहुति डालें।
मानवता के महा ध्येय का मन देकर व्रत पालें॥

[हर्षसूचक ध्वनि]

९ :: सर्वोदय

['वैष्णव जन' की वाद्य-ध्वनि, उसके मंद होते-होते]

स्वर १ : मातृभूमि की सेवा के लिए शरीर, प्राण, मन की तैयारी, यही अच्छे नागरिक अथवा पृथ्वी-पुत्र का धर्म है।

स्वर २ : मातृभूमि के उत्तम पुत्र वे हैं, जो उसकी सेवा का व्रत लेकर अपना जीवन अर्पित करते हैं।

स्वर ३ : मातृभूमि की प्रतिष्ठा सत्य पर है। सत्य के बल पर ही यह भूमि टिकी है।

[स्फूर्तिदायक वाद्य-ध्वनि, पृष्ठभूमि में]

स्वर १ : सत्यात्मक नीति और प्राकृतिक विज्ञान दिन-रात की तरह एक-दूसरे पर आश्रित हैं। मातृभूमि की उन्नति के लिए दोनों समान रूप से आवश्यक हैं।

स्वर २ : जिसके मन में केवल अपने लिए संग्रह का भाव

है, वह मातृभूमि की दृष्टि से चोरी का दोषी है।

स्वर ३ : मातृभूमि का जीवन एक अखण्ड राष्ट्रीय यज्ञ है। यहाँ केवल अपने लिए व्यक्ति या कोई वर्ग बहुत दिन तक जीवित नहीं रह सकता। जिस पद्धति से सबके जीवन का हित स्वस्तिमान् हो, वही यहाँ उचित सत्य है।

[उल्लाससूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : (**अंतिम शब्दों को दोहराते हुए**) जिस पद्धति से सबके जीवन का हित स्वस्तिमान् होता हो, वही सत्य है। (**अल्प विराम**) ये स्वर हैं हमारे ऋषियों के, जो सहस्रों वर्षों से इस धरा पर गूँजते रहे हैं। कितनी दिव्य है सबके हित की कल्पना ! कितना कल्याणकारी है सबके मंगल का आदर्श ! लेकिन यह क्या ! यह दूसरा स्वर कैसा उभर रहा है :

स्वर १ : बहुसंख्यक लोगों का सुख बढ़ाना, उनका अभ्युदय करना मनुष्य का कर्तव्य है। सुख का अर्थ है शारीरिक सुख, रुपये-पैसे का सुख।

स्वर २ : ऐसे सुख को प्राप्त करने में नीति के नियम भंग होते हों, तो इसकी अधिक चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

स्वर ३ : थोड़ों को दुःख पहुँचाकर भी बहुतों को सुख दिलाने में कोई बुराई नहीं है।

उद्घोषक : ये स्वर थे पश्चिम के, उस सभ्यता के, जो भौतिक समृद्धि को, भौतिक सुख-सुविधाओं को, सर्वोपरि मानती है और जिसके सामने वहुजन का हित है, सबका नहीं। पर ठहरिये, एक स्वर और उभर आया है :

स्वर १ : बहुसंख्यक मनुष्यों के शारीरिक और आर्थिक सुख के लिए यत्न करना ही ईश्वर का नियम नहीं है और केवल इतने ही के लिए प्रयत्न करें और उसमें नैतिक नियमों का भंग किया जाय, यह ईश्वरीय नियम के विरुद्ध आचरण है।

[सुखद वाद्य-ध्वनि। उसीकी पृष्ठभूमि में]

उद्घोषक : जानते हैं, यह स्वर किसका है ? यह स्वर है उसी पश्चिम के विचारकों का, जिन्होंने 'सर्व-जन हिताय' पर जोर दिया और बताया कि नैतिक नियमों के पालन में ही मनुष्य-जाति का कल्याण है। उस स्वर को मुखरित करने-वालों में जॉन रस्किन प्रमुख थे। उनकी एक छोटी-सी पुस्तक ने हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की जीवन-धारा ही नयी दिशा में मोड़ दी।

[स्टेशन का कोलाहल। उस कोलाहल के मंद स्वरों के बीच]

अंग्रेज : गांधीभाई, आपका चौबीस घंटों का सफर है। लो, यह किताब रास्ते में पढ़ने लायक है। आपको पसंद आयेगी, जरूर पसन्द आयेगी।

[रेल के चलने का स्वर : मंद पड़ने पर]

उद्घोषक : यह पुस्तक थी रस्किन की 'अन्टु दिस लास्ट', उसे देनेवाले थे पोलक, दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी के सहयोगी। गांधीजी जोहान्सबर्ग से नेटाल जा रहे थे। लेकिन रुकिये, यह क्या सुनाई दे रहा है :

गांधीजी : (**धीरे-धीरे**) पुस्तक को जो मैंने पढ़ना शुरू किया, तो खतम किये बिना नहीं छोड़ सका। ट्रेन शाम को नेटाल पहुँचती थी। पहुँचने के बाद रातभर नींद नहीं आयी। इस पुस्तक के विचारों के अनुसार जीवन बनाने की धुन लग रही थी।

मेरे जीवन में यदि किसी पुस्तक ने तत्काल महत्त्वपूर्ण परिवर्तन कर डाला तो वह यही पुस्तक थी।

मेरा विश्वास है कि जो चीज मेरे अंतर-तर में बसी हुई थी, उसका स्पष्ट प्रतिबिम्ब मैंने इस ग्रन्थ-रत्न में देखा और इस कारण उसने मुझ पर अपना साम्राज्य जमा लिया और अपने विचारों के अनुसार मुझसे आचरण करवाया।

उद्घोषक : ओहो, ये तो गांधीजी के उद्गार थे। वह इस पुस्तक से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने 'सर्वोदय' के नाम से उसका सार प्रस्तुत किया।

लेकिन रुकिये, अभी गांधीजी के उद्‌गार समाप्त नहीं हुए हैं :

गांधीजी : सर्वोदय के सिद्धान्त को मैं इस प्रकार समझा : सबके भले में अपना भला है।
वकील और नाई, दोनों के काम की कीमत एक-सी होनी चाहिए, क्योंकि आजीविका का अधिकार दोनों को एक-सा है।
मजदूर और किसान का सादा जीवन ही सच्चा जीवन है। पहली बात तो मैं जानता था। दूसरी का मुझे आभास हुआ करता था। पर तीसरी तो मेरे विचार-क्षेत्र में आयी तक न थी। पहली बात में पिछली दोनों बातें समाविष्ट हैं, यह बात सर्वोदय से मुझे सूर्य के प्रकाश की भाँति दिखायी देने लगी। सबेरा होते ही मैं उसके अनुसार अपने जीवन को बनाने की चिन्ता में लग गया।

[वाद्य-ध्वनि, उतार-चढ़ाव, उसी पृष्ठभूमि में]

उद्‌घोषक : सर्वोदय के सिद्धान्त को अपने जीवन में लागू करने के लिए गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में फिनिक्स आश्रम की स्थापना की। इस आश्रम में रहनेवाले, शहरी वायुमण्डल से दूर, देहात में रहते थे, सादगी और सचाई का जीवन बिताते थे। सारा काम स्वयं करते थे। सब

एक-सा भोजन-खर्च लेते थे। सब एक-दूसरे के सुख-दुःख में भागीदार होते थे।

स्वर १ : सर्वोदय का सिद्धान्त गांधीजी के लिए केवल वैयक्तिक साधना की चीज नहीं थी, बल्कि वह सम्पूर्ण सृष्टि की, जिसका मनुष्य एक अंग है, एकता सम्पादित करने का मार्ग थी।

स्वर २ : उनकी सर्वोदय की कल्पना स्वीकार नहीं करती थी कि व्यक्तियों, समूहों, वर्गों तथा राष्ट्र के हित अलग-अलग और विरोधी हो सकते हैं।

स्वर ३ : इन्हीं गलत धारणाओं और गलत आचार ने हमारे समाज और राष्ट्र में नाना प्रकार की विषमताएँ उत्पन्न कर दी थीं। धनी और निर्धन, सवर्ण और अछूत, बुद्धिजीवी और श्रमजीवी आदि भेदों ने हमारे सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन को कलुषित कर दिया था।

मजदूर : (**गिड़गिड़ाते स्वर में**) अन्नदाता, मुझे काम पर से मत हटाइये। मेरे बाल-बच्चे भूखों मर जायेंगे।

मालिक : (**दम्भभरी आवाज में**) नहीं, हम तुमको नहीं रखेंगे। तुम कामचोर हो, बेईमान हो।

मजदूर : मालिक, मेरी घरवाली बीमार पड़ी है, उस पर

रहम खाइये । मैं आपसे दया की भीख माँगता हूँ, आपके पैरों पड़ता हूँ ।

[पैरों पर गिरने और सिसकने की आवाज]

मालिक : यह सब ढोंग करने की जरूरत नहीं है । मैं तुम लोगों को अच्छी तरह जानता हूँ । जाओ यहाँ से । चौकीदार, इसे बाहर निकाल दो ।

[दुःखसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : यह था समाज का एक चित्र, जिसमें एक ओर विपुलता का दर्प था, दूसरी ओर अभाव की विवशता थी । सम्पन्न और विपन्न के बीच की इस चौड़ी खाई ने हमारे जीवन को दूभर बना दिया था । लेकिन समाज केवल इसी व्याधि से ग्रस्त न था । उसकी जड़ को और भी व्याधियाँ खोखला कर रही थीं ।

[दुःखसूचक वाद्य-ध्वनि]

चौधरी : तुम कौन हो ? क्या बात है ?

अछूत : मालिक, मैं रामचरन भंगी का लड़का हूँ ।

चौधरी : क्यों, क्या है ?

अछूत : चौधरीजी, सिरीगोपाल पंडित ने मेरे भाई को आज इतना मारा है कि उसकी हड्डी-पसली चूर-चूर हो गयी है ।

चौधरी : क्यों मारा है ?

अछूत : वह कुएँ से पानी लेने गया था । उसने कुएँ की जगत पर घड़ा रख दिया ।

चौधरी : (**तेज होकर**) जगत पर घड़ा रख दिया? क्यों रख दिया? सिरीगोपाल ने ठीक किया, बिलकुल ठीक किया। मैं होता तो वहीं उसके प्राण ले लेता। तुम लोग इसी लायक हो।

[विषादयुक्त वाद्य-ध्वनि के उतार-चढ़ाव के बाद]

उद्घोषक : यह थी वह महाव्याधि, जिसने इन्सान को हैवान बना दिया था। बेचारे अछूतों के साथ ऐसा व्यवहार किया जाता था, जैसा पशुओं के साथ किया जाता है। वे ऊँची जाति के आगे सिर नहीं उठा सकते थे। लेकिन ठहरिये, वह सामने खड़े दो आदमी किसलिए हैरान दिखायी दे रहे हैं?

बुद्धिजीवी : हम बाबू लोग हैं।

श्रमजीवी : साहब!

बुद्धिजीवी : 'साहब-साहब' क्या करता है? यह हमारा काम नहीं है कि घर की सफाई करें, बर्तन माँजें, कपड़े धोयें। हम तो कलम चलाता है, किताब पढ़ता है।

श्रमजीवी : साहब, क्या किताब हम नहीं पढ़ सकते?

बुद्धिजीवी : (**बिगड़कर**) तुम नहीं पढ़ सकता, नहीं पढ़ सकता। तुम छोटा आदमी है। झाड़ू लगायेगा, फावड़ा चलायेगा। हम ऐसा गंदा काम नहीं कर सकता।

[शोकसूचक वाद्य-ध्वनि। उसके थमने पर]

उद्घोषक : यह दो व्यक्तियों की बात नहीं थी, यह दो वर्गों का जीवन था। एक, जो बुद्धि से काम करता है और हाथ-पैर की मेहनत को हेय समझता है। दूसरा वह, जो श्रमजीवी है, वह शरीर से श्रम करता है, पसीना बहाता है। पर समाज उसे तिरस्कार की निगाह से देखता है। पर रुकिये, अनाचार का यहीं अन्त नहीं है। वह देखिये, वह स्त्री क्यों बिलख रही है ?

[स्त्री के रोने और बिलखने की आवाज]

स्त्री : (**रोते हुए**) आपने मुझे क्यों मारा है ? आखिर मेरा कसूर क्या है ?

पुरुष : (**अभिमान के स्वर में**) तुम्हारा कसूर यह है कि तुमने हमारे काम में दखल दिया। हमारे सामने तुम्हें मुँह बन्द करके रहना चाहिए।

स्त्री : (**सिसकते हुए**) क्या हम लोग इन्सान नहीं हैं ?

पुरुष : नहीं, तुम इन्सान नहीं हो। तुमको हमारी हर बात मानकर चलना होगा, नहीं तो हम तुमको कुचलकर रख देगा। समझी।

उद्घोषक : ये थे हमारे समाज के कुछ चित्र, जिन्होंने गांधीजी को मर्मान्तिक पीड़ा पहुँचायी। मानव-मानव के बीच का फासला, भले ही वह किसी प्रकार का और किसी भी कारण से हो, उनके लिए असह्य था। उनके सामने तो 'वसुधैव

कुटुम्बकम्' का आदर्श था। राम-राज्य की कल्पना थी, सर्वोदय के स्वप्न थे। वह वैकुण्ठ का साम्राज्य इस धरा पर स्थापित करना चाहते थे।

स्वर १ : वह चाहते थे कि सब सुखी रहें।

स्वर २ : सब प्रेम से रहें।

स्वर ३ : सब मिल-जुलकर काम करें।

स्त्री : सबका रहन-सहन सादा हो।

पुरुष : सबके विचार ऊँचे हों।

स्त्री : सबको विकास का अवसर हो।

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : उनके लिए यह मात्र आकांक्षा ही नहीं थी, उनके जीवन का यह श्वास थी। इसके लिए उन्होंने सबसे पहले अपने को कसा। सत्य की आराधना की, अहिंसा के उपासक बने, अपरिग्रह का व्रत लिया और इस प्रकार सेवा के लिए सक्षम बनकर उन्होंने अपने को उस वर्ग का प्रतिनिधि बना लिया, जो दीन था, दलित था, असहाय था, अभावग्रस्त था, जिसे विकास की सुविधाएँ नहीं थीं और जो मानवीय अधिकारों से वंचित था।

स्वर १ : उनके सामने समूचे मानव-समाज का हित था।

स्वर २ : उनका हृदय अत्यन्त स्पन्दनशील था। उसमें सबके लिए प्रेम था।

स्वर ३ : उनकी करुणा अत्यन्त व्यापक थी। वह किसीका भी दुःख नहीं देख सकते थे।

स्वर १ : उनकी मान्यता थी कि जिस प्रकार शरीर का कोई अंग दुर्बल होने पर मनुष्य को स्वस्थ नहीं कहा जा सकता, उसी प्रकार समाज का कोई वर्ग पिछड़ा हुआ है, हीन है अथवा अभावों से पीड़ित है तो वह समाज कभी स्वस्थ और सुखी नहीं हो सकता।

[आशासूचक वाद्य-ध्वनि]

स्वर २ : उनका कहना था :

गांधीजी : मनुष्य की वृत्तियाँ चंचल हैं। उसका मन बेकार की दौड़धूप किया करता है। उसका शरीर जैसे-जैसे ज्यादा देते जायँ, वैसे-वैसे ज्यादा माँगता है। ज्यादा लेकर भी वह सुखी नहीं होता। भोग भोगने से भोग की इच्छा बढ़ती जाती है। इसलिए हमारे पुरखों ने भोग की सीमा बाँध दी। बहुत सोचकर उन्होंने देखा कि सुख-दुःख तो मन के कारण है। अमीर अपनी अमीरी के कारण सुखी नहीं है, गरीब अपनी गरीबी के कारण दुःखी नहीं है। अमीर दुःखी देखने में आता है और गरीब सुखी दिखायी देता है। करोड़ों लोग तो गरीब ही रहेंगे। ऐसा देखकर पूर्वजों ने भोग की वासना छुड़वायी।

स्वर १ : हजारों साल पहले जो हल काम में लिया जाता था, उससे काम चलाया ।

स्वर २ : हजारों साल पहले जैसी शिक्षा थी, वही चलती आयी ।

स्वर ३ : नाशकारक होड़ को जगह नहीं दी । सब अपना-अपना धंधा करते रहे ।

स्वर १ : उन्होंने माना कि हाथ-पैरों का इस्तेमाल करने में ही सच्चा सुख है, उसीमें तन्दुरुस्ती है ।

स्वर २ : उन्होंने देखा कि राजाओं और उनकी तलवार की बनिस्बत नीति का बल ज्यादा बलवान् है। इसलिए राजाओं को उन्होंने नीतिवान् पुरुषों—ऋषियों, फकीरों—से कम दरजे का माना ।

स्वर ३ : उन्होंने मानवीय गुणों को सबसे ऊँचा स्थान दिया ।

उद्घोषक : इसी उदात्त भावना को गांधीजी ने अपनी प्रवृत्तियों का आधार बनाया । वह मनुष्य के अन्दर स्वाभिमान जाग्रत करना चाहते थे। उसके पुरुषार्थ को गति देना चाहते थे । उन्होंने कहा :

गांधीजी : प्रत्येक उद्यमी मनुष्य को आजीविका पाने का अधिकार है, मगर धनोपार्जन का अधिकार किसीको नहीं है। जो आजीविका से अधिक धन लेता है, वह जान में हो या अनजान में, दूसरों की जीविका छीनता है ।

उद्घोषक : उन्होंने यह भी कहा :

गांधीजी : मैं नंगों का आश्रयदाता बनने का पाप कभी नहीं करूँगा, लेकिन यह अनुभव करने पर कि उनको तबाह करने में मेरा भी हाथ है, मैं उन्हें समाज में सम्मान का स्थान दूँगा।

उद्घोषक : उनका यह भी कथन था :

गांधीजी : भगवान् के नाम पर किया गया और उसे समर्पित किया गया कोई भी काम छोटा नहीं है। इस तरह किये गये हरएक छोटे या बड़े काम का समान मूल्य है। कोई भंगी यदि अपना काम भगवान् की सेवा की भावना से करता हो, तो उसके और उस राजा के काम का, जो अपनी प्रतिभा का उपयोग भगवान् के नाम पर और ट्रस्टी की तरह करता है, समान महत्त्व है।

उद्घोषक : वह बड़ी-से-बड़ी संख्या का अधिक-से-अधिक हित हो, इतने से संतुष्ट नहीं थे। वह तो सबका उदय चाहते थे। अपनी इस बात पर जोर देते हुए उन्होंने कहा : अहिंसा का पुजारी उपयोगितावाद का समर्थन नहीं कर सकता। वह तो 'सर्वभूतहिताय' अर्थात् सबके लिए ही प्रयत्न करेगा और इसी आदर्श की प्राप्ति में मर जायगा। इस प्रकार वह इसलिए

मरना चाहेगा कि दूसरे जी सकें। दूसरों के साथ-साथ वह अपनी सेवा भी आप मरकर करेगा। सबके अधिकतम सुख के भीतर अधिकांश का अधिकतम सुख भी मिला हुआ है।

[प्रेरणादायक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता पर प्रहार करते हुए उन्होंने कहा :

गांधीजी : आर्थिक समानता अहिंसक स्वतंत्रता की कुंजी है। उसके लिए प्रयत्न के माने यह हैं कि एक तरफ से जिन मुट्ठीभर धनाढ्यों के हाथ में राष्ट्र की सम्पत्ति का अधिकांश इकट्ठा हुआ है, वे नीचे को उतरें और जो करोड़ों लोग भूखे और नंगे हैं, उनकी भूमिका ऊँची उठे।

उद्घोषक : गांधीजी ने सर्वोदय का मंत्र ही नहीं दिया, उसकी साधना का मार्ग भी बताया। वह स्वयं उस पर चले। उन्होंने ऐसे-ऐसे अहिंसात्मक अस्त्रों की खोज की, जिन्हें देखकर दुनिया चकित रह गयी। सत्याग्रह की महिमा पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कहा :

गांधीजी : सत्याग्रह के बिना सर्वोदय असम्भव है। सत्य का आग्रह बिना अहिंसा के हो नहीं सकता। इसलिए सर्वोदय-सिद्धि अहिंसा की सिद्धि पर निर्भर है, अहिंसा की सिद्धि तपश्चर्या पर

निर्भर है। तपश्चर्या सात्त्विक होनी चाहिए। उसमें अविश्राम, उद्यम, विवेक आदि समाविष्ट हैं। शुद्ध तप में शुद्ध ज्ञान होता है।

उद्घोषक : इस सारे तत्त्वज्ञान को अपने कर्मयोग से गांधीजी धरती पर उतारकर लाये। ज्ञान और कर्म, विचार और व्यवहार का जब मेल होता है, तभी मानवता के दर्शन होते हैं, तभी सर्वोदय की सिद्धि होती है। इसलिए आचार और विचार का समन्वय करने के लिए गांधीजी ने जनता के सामने रचनात्मक कार्यक्रम रखे।

[वाद्य-ध्वनि : उसकी पृष्ठभूमि में]

स्वर १ : जात-पाँत, छूतछात और प्रान्तीयता का नाश कर दो।

स्वर २ : साम्प्रदायिकता को मिटा दो, एकता स्थापित करो।

स्वर ३ : हरिजन और आदिवासियों को गले लगाओ।

स्वर १ : किसान और मजदूर, विद्यार्थी और नारी, राष्ट्र की रीढ़ हैं। इनकी सेवा करो।

स्वर २ : प्रान्तीय भाषाओं और राष्ट्रभाषा की उन्नति करो। घर-घर में शिक्षा का प्रकाश फैलाओ। स्वावलम्बन के लिए बुनियादी शिक्षा सर्वश्रेष्ठ है।

स्वर ३ : शराब मत पियो, जुए आदि व्यसनों को तिलांजलि दो। आरोग्य के नियमों का पालन करो।

स्वर १ : कोढ़ियों की सेवा करो, प्राकृतिक चिकित्सा को अपनाओ। सदा याद रखो कि सबसे बड़ा वैद्य राम-नाम है।

स्वर २ : भारत गाँवों में बसता है। गाँवों को मत भूलो। उनकी सफाई रखो और ग्रामवासियों को आगे बढ़ने के मौके दो। ग्रामोद्योगों को प्रोत्साहित करो।

स्वर ३ : समाज में से धनी और निर्धन के भेद को मिटाओ। आर्थिक समानता को लाने का सबसे बड़ा साधन है चरखा। इन सारी प्रवृत्तियों की ग्रहमाला का वही सूर्य है।

उद्घोषक : इस प्रकार मानव के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आचरण से सम्बद्ध कोई भी ऐसी प्रवृत्ति नहीं थी, जिसे गांधीजी ने छोड़ा हो। लोगों ने आपत्ति की कि मशीनों के इस युग में केवल शरीर-श्रम से काम नहीं चलेगा। मशीनों की भी सहायता लेनी होगी। गांधीजी का उत्तर था :

गांधीजी : मैं मशीनों का विरोधी नहीं हूँ, मशीनों की दासता का विरोधी हूँ।

उद्घोषक : सर्वोदय की क्रांतिकारी वाणी देश के कोने-कोने में गूँज उठी। लोक-चेतना जागृत हुई।

देश के कोटि-कोटि जन कमर कसकर कर्म में जुट गये। देश आजाद हुआ। चारों ओर आनन्द की लहर दौड़ गयी। जिस वायुमण्डल में साँस लेना दूभर था, उसमें परिवर्तन हुआ। मनुष्य-मनुष्य के बीच के विभाजक दायरे टूटे और एक नयी प्राणवायु पाकर भारत के लोक-जीवन ने नये स्वास्थ्य की अनुभूति की।

[वाद्य-ध्वनि]

हरिजन : (**स्वाभिमानपूर्वक**) जी, मैं अछूत नहीं हूँ। मैं इन्सान हूँ। जैसे और, वैसा मैं। भगवान् ने सबको एक-सा बनाया है। सबको एक-से हाथ-पैर दिये हैं।

सवर्ण : नहीं भाई, यह तुम क्या कहते हो? सब एक बराबर कैसे हो सकते हैं? एक हाथ की सारी उँगलियाँ भी बराबर नहीं होतीं।

हरिजन : उँगलियाँ बराबर भले ही न हों, पर वे एक-दूसरे की पूरक होती हैं। छोटी उँगली भी मदद देना बन्द कर दे तो काम करना मुश्किल हो जाय।

सवर्ण : ये सब ज्ञान की बातें हैं। अछूत अछूत…

हरिजन : नहीं, ऐसा मत कहिये। अब हमारा देश आजाद है और ऐसा कहने का नतीजा सरकार की मेहमानी होता है। अब कोई न छूत है, न अछूत।

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : देखा, आपने। यह था सर्वोदय का प्रताप। छूत-अछूत की कलुषित भावना को मिटाने के लिए गांधीजी ने कितनी साधना की थी! देशव्यापी दौरा किया, उपवास किया, अछूतों के लिए मंदिर खुलवाये और सवर्णों के मस्तक से इस कलंक को धोने के लिए उन्हें हरिजन की संज्ञा दी। अपने पत्रों का नाम 'हरिजन' रखा। लेकिन ठहरिये, वह कौन खिलखिलाकर हँस रहा है?

[हँसी की गूँज]

स्त्री : (**हँसते हुए**) आपने सुना, नीलिमा विधान-सभा की सदस्या बन गयी।

पुरुष : हाँ जी, अब तो जमाना बदल गया है।

स्त्री : और सुना, मेरी सहेली अन्नपूर्णा कैनेडा जा रही है।

पुरुष : तो इसमें अचरज की क्या बात है?

स्त्री : हम लोगों ने मिलकर एक संघ की स्थापना की है। उसमें शिक्षा, सफाई, शिशु-पालन आदि विषयों पर चर्चा हुआ करेगी। चर्चा ही क्यों, इस मोहल्ले को आदर्श मोहल्ला बनाने के लिए हम काम भी करेंगी।

पुरुष : यह तुम सबने बहुत अच्छा किया है। हम तुम्हारी पूरी मदद करेंगे।

[हर्षसूचक वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : यह था सर्वोदय का एक और चमत्कार। अब थी किसी पुरुष की हिम्मत, जो तुलसीदास का सहारा लेकर कहता—**'ढोल, गँवार, शूद्र, पशु, नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी।'** सर्वोदय के कार्यक्रम में गांधीजी ने नारी-जागरण को भी सम्मिलित किया था। नतीजा यह हुआ कि स्त्रियों ने वह काम कर दिखाया, जिसकी मनुष्य कल्पना भी नहीं कर सकता था। उन्होंने सत्याग्रह किया, जेल गयीं, रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलायीं और सभी क्षेत्रों में सिद्ध कर दिया कि वे पुरुषों से किसी प्रकार पीछे नहीं हैं। लेकिन जरा रुकिये, यह कौन है, जो इतने उल्लास से बातें कर रहा है ?

मजदूर १ : (**हँसते हुए**) अरे चुन्नी, देखा बाबूसाहब कितने हैरान हो रहे हैं ! खेत पर काम करने के लिए उन्हें आदमी ही नहीं मिलता।

मजदूर २ : वह तो बड़ी अकड़ में घूमते थे। हमें नीची निगाह से देखते थे। बात-बात पर गाली देते थे।

मजदूर १ : यह सब गांधीबाबा का करिश्मा है कि अब हमें कोई नाच नहीं नचा सकता। पर भैया, चुन्नी, यह कितनी बुरी बात है कि हमारा

देश किसानों का देश होते हुए भी बाहर से अन्न मँगाता है !

मजदूर २ : हाँ भैया, यह तो बड़े शरम की बात है। अब हम धरती की और ज्यादा सेवा करेंगे, अधिक अन्न उपजायेंगे।

मजदूर १ : यही करना होगा, तभी हमारी अन्न की कमी दूर होगी और हमारा सिर ऊँचा होगा।

मजदूर २ : यही करेंगे।

[खुशी-खुशी दोनों का प्रस्थान]

उद्घोषक : गांधीजी ने कैसे-कैसे मंत्र दिये थे :

गांधी : असत्य से कोई सत्य को नहीं पा सकता। सत्य को पाने के लिए हमेशा सत्य का आचरण करना होगा। सत्य में अहिंसा छिपी है और अहिंसा में सत्य। इसीलिए मैंने कहा है कि सत्य और अहिंसा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

गांधी : जब तक सेवा की ज़ड़ प्रेम में न हो, तब तक वह सम्भव ही नहीं है। सच्चा प्रेम समुद्र की तरह निस्सीम होता है और हृदय के भीतर ज्वार की तरह उठकर बढ़ते हुए वह बाहर फैल जाता है तथा सीमाओं को पार करके दुनिया के छोरों तक जा पहुँचता है।

गांधी : जब तक हम अपना अहंकार भूलकर शून्यता की स्थिति नहीं प्राप्त करते, तब तक हमारे

लिए अपने दोषों को जीतना सम्भव नहीं है। ईश्वर पूर्ण समर्पण के बिना संतुष्ट नहीं होता।

गांधी : सत्य की खोज करनेवाला, अहिंसा बरतनेवाला, परिग्रह नहीं कर सकता। परमात्मा परिग्रह नहीं करता। अपने लिए जरूरी चीजें वह रोज-के-रोज पैदा करता है। इसलिए यदि हम उस पर भरोसा रखते हैं, तो हमें समझना चाहिए कि हमारी जरूरत की चीजें वह रोजाना देता है और देगा।

गांधी : लोग कहते हैं, आखिर साधन तो साधन ही हैं। मैं कहूँगा, आखिर साधन ही तो सब कुछ हैं। जैसे साधन होंगे, वैसा ही साध्य होगा। लक्ष्य की सिद्धि ठीक उतनी ही शुद्ध होती है, जितने हमारे साधन शुद्ध होते हैं।

गांधी : मैं सदा से यह मानता आया हूँ कि नीचे-से-नीचे और कमजोर-से-कमजोर के प्रति हम जोर-जबरदस्ती से सामाजिक न्याय का पालन नहीं कर सकते। मैं यह भी मानता आया हूँ कि पतित-से-पतित जनों को भी उचित शिक्षा दी जाय तो अहिंसक साधनों द्वारा सब प्रकार के अत्याचारों का प्रतिकार किया जा सकता है। अहिंसक असहयोग ही उसका मुख्य साधन है।

गांधी : सच्चा समाजवाद तो हमें अपने पूर्वजों से प्राप्त हुआ है। वे हमें यह सिखा गये हैं कि 'सब भूमि

गोपाल की है', इसमें कहीं 'मेरी' और 'तेरी' की सीमाएँ नहीं हैं। गोपाल यानी कृष्ण यानी भगवान्। आधुनिक भाषा में गोपाल यानी राज्य यानी जनता। आज जमीन जनता की नहीं है, यह बात सही है, पर इसमें दोष उस शिक्षा का नहीं है। दोष तो हमारा है, जिन्होंने उस शिक्षा के अनुसार आचरण नहीं किया।

[वाद्य-ध्वनि]

उद्घोषक : यह सब मानवता को सम्पन्न करनेवाले मूल मंत्र हैं और सम्पन्न मानवता ही सर्वोदय की बुनियाद है। मानवता एक और अखण्ड है, वह देश की सीमा को स्वीकार नहीं करती। भाषा के भेद को नहीं जानती। इसलिए सर्वोदय के सन्देश में सारे जगत् का हित समाया हुआ है। सर्वोदय का स्वर अन्य देशों में भी मुखरित हुआ। बहुत-से देशों के निवासियों ने अनुभव किया कि दुनिया का क्लेश दूर करना है तो स्वार्थ को छोड़ना होगा और विग्रह के स्थान पर एकता सम्पादित करनी होगी।

स्वर १ : जिस भूमि ने जन्म दिया था, उसे गांधीजी आदर्श बनाना चाहते थे।

स्वर २ : अपनी इस आकांक्षा को व्यक्त करते हुए

उन्होंने बड़े मार्मिक शब्दों में अपनी भावना व्यक्त की थी। कहा था :

गांधी : भारत-भूमि एक दिन स्वर्ण-भूमि कहलाती थी, इसलिए कि भारतवासी स्वर्णरूप-से थे। भूमि तो वही है, पर आदमी बदल गये हैं। इसलिए यह भूमि उजाड़-सी हो गयी है। इसे पुन: सुवर्ण बनाने के लिए हमें सद्‌गुणों द्वारा स्वर्णरूप बनना है। हमें स्वर्ण बनानेवाली पारसमणि दो अक्षरों में अन्तर्निहित है और वह है सत्य। यदि प्रत्येक भारतवासी सत्य का आग्रह करेगा तो सर्वोदय की कल्पना अवश्य साकार होगी।

उद्‌घोषक : गांधीजी के उत्सर्ग के बाद उनके अनन्य अनुयायी आचार्य विनोबा भावे ने सर्वोदय के सन्देश को घर-घर पहुँचाने के लिए भूदान की मन्दाकिनी प्रवाहित की। उन्होंने सारे देश में पदयात्रा की, प्यार से लाखों एकड़ भूमि प्राप्त की और असंख्य लोगों को सेवा की दीक्षा दी। उनके भूदान-यज्ञ में आगे चलकर ग्रामदान, सम्पत्तिदान, जीवनदान आदि सम्मिलित हुए और अब तो उन्हें ग्राम या जिले ही नहीं, पूरे प्रखण्ड और प्रदेश प्राप्त हो रहे हैं।

स्वर १ : उनकी अहिंसक क्रांति का मूल उद्देश्य भूपतियों से भूमि प्राप्त करके भूमिहीनों में बाँट देना

मात्र नहीं है। वे चाहते हैं कि सारी मानव-जाति प्रेम से रहे, सब एक-दूसरे के सुख-दुःख में काम आयें और कोई किसीका शोषण न करे, न अपना शोषण होने दे।

स्वर २ : वे कहते हैं कि बिना अन्त्योदय के सर्वोदय सम्भव नहीं होगा, अर्थात् जो सबसे नीचे है, पिछड़ा हुआ है, पहले उसे उठाना होगा।

स्वर ३ : इस प्रकार उनकी अहिंसक क्रांति नीचे से अपना कार्य आरम्भ करती है।

उद्‌घोषक : वह मानव को शुद्ध और प्रबुद्ध बनाने के अभिलाषी हैं। उनकी बस यही इच्छा है कि हर व्यक्ति अपने स्वार्थ को त्यागे, दूसरे की चिन्ता रखे, सबको प्यार करे और ऐसे समाज के निर्माण में सहायक हो, जिसकी बुनियाद मानव-नीति हो और जिसमें खरा इन्सान सबसे ऊँचे स्थान पर प्रतिष्ठित हो। यही सर्वोदय है।

[आशासूचक, हर्षदायक वाद्य-ध्वनि : उसीकी पृष्ठभूमि में]

गूँज : **वैष्णवजन तो तेने कहीए**
जे पीड़ पराई जाणे रे।
परदुःखे उपकार करे तोये
मन अभिमान न आणे रे॥
वैष्णवजन तो तेने कहीए···

●